मङ्गल समर्पण

5

मङ्गल समर्पण : विद्वानों एवं उपकृत मुमुक्षुओं द्वारा

पूज्य गुरुदेव ने बतलाये....

पण्डितजी ने समझाये...

परमागम के सारभूत सिद्धान्त

1. एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का स्पर्श नहीं करता।
2. प्रत्येक द्रव्य की प्रत्येक पर्याय क्रमबद्ध ही होती है।
3. उत्पाद, उत्पाद से है; व्यय या ध्रुव से नहीं।
4. उत्पाद, अपने षट्कारक के परिणमन से होता।
5. पर्याय के और ध्रुव के प्रदेश भिन्न हैं।
6. भावशक्ति के कारण पर्याय होती ही है, करनी नहीं पड़ती।
7. भूतार्थ के आश्रय से सम्यग्दर्शन होता है।
8. चारों अनुयोगों का तात्पर्य वीतरागता है।
9. स्वद्रव्य में भी द्रव्य-गुण-पर्याय का भेद करना, वह अन्यवशपना है।
10. ध्रुव का अवलम्बन है, वेदन नहीं; और पर्याय का वेदन है, अवलम्बन नहीं।

पण्डितश्री कैलाशचन्द्रजी : एक अनोखे व्यक्तित्व

— पण्डित रतनचन्द भारिल्ल

प्राचार्य - श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय, जयपुर

आदरणीय पण्डित श्री कैलाशचन्द्रजी, पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के अनन्य भक्त रहे हैं, वे सोनगढ़ जाकर (वहाँ) महीनों रहते थे तथा वहाँ जो सीखते थे, गाँव-गाँव जाकर मुमुक्षुओं को पढ़ाते थे। आप समाज में डण्डावाले पण्डितजी के नाम से विख्यात रहे हैं क्योंकि वे खड़े होकर पढ़ाते थे और बीच-बीच में डण्डा बजाते थे। आप वात्सल्य से महिलाओं को भी अनेक नामों से पुकारते थे, महिलायें भी उन्हें श्रद्धा से अपनाती थीं और उनकी बात ध्यान से सुनती थीं। आपको मोक्षमार्गप्रकाशक की निम्न पंक्तियाँ बहुत प्रिय थीं।

'अनादि निधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी मर्यादासहित परिणमित होती है, कोई किसी के आधनी नहीं है। कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती। उन्हें परिणमित कराना चाहे, वह कोई उपाय नहीं है, वह तो मिथ्यादर्शन ही है।'

(मोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ 52, अध्याय-3)

पण्डितजी उक्त पंक्तियों को कपड़े का बोर्ड बनाकर उसके ऊपर लिखा कर रखते थे और जगह-जगह जाकर मुमुक्षु समाज को उक्त पंक्तियों पर विस्तार से व्याख्यान तो करते ही थे, महिलाओं एवं बच्चों के बीच भी कक्षाओं में उक्त वाक्य उन्हें रटा देते थे, याद करा देते थे।

पण्डितजी, घर-परिवार का मोह छोड़कर, महीनों नगर-नगर में जाकर रहते थे तथा व्याख्यान करते और कक्षाएँ चलाते थे।

पण्डितजी साहब ने मूल सिद्धान्तों के आधार पर जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला के रूप में सात भाग संकलित कर लिए थे, उन्हें अपने पैसों से छपाकर, उनके आधार से कक्षाएँ चलाते थे। बाद में उन्हीं भागों की विषयवस्तु को एकत्रित उनके एकमात्र सुपुत्र आ. श्री पवनजी ने जिनागमसार के नाम से स्व द्रव्य से प्रकाशित करा दिया है और उसे गाँव-गाँव से एवं नगर-नगर में प्रेषित कर पण्डितजी साहब की कीर्ति को अमर कर दिया है। आदरणीय पण्डितजी पहले बुलन्दशहर के नाम से जाने जाते थे, अस्वस्थ होने पर वे अपने पुत्र के पास अलीगढ़ में ही रहने लगे हैं।

जब से अलीगढ़ में 'मङ्गलायतन' नामक वृहद तीर्थधाम एवं मङ्गलायतन विश्वविद्यालय नाम से एक वृहद शिक्षाकेन्द्र की स्थापना हुई, तब से आदरणीय भाईसाहब श्री

मङ्गल समर्पण

पवनजी एक धार्मिक व्यक्तित्व के रूप में जनमानस पर छा गये हैं। सम्भव है पहले ही पण्डित श्री कैलाशचन्दजी साहब ने उनमें धर्म प्रेम के बीज डाल दिये हों, जो समय पाकर पल्लवित पुष्पित हो गये। पर पण्डितश्री कैलाशचन्द्रजी इतने निर्मोही एवं तत्त्व में आकण्ठ निमग्न रहे कि उन्होंने अपने इकलौते पुत्र का कभी नामोल्लेख तक नहीं किया। एतदर्थ उनकी जितनी भी प्रशंसा की जाय, कम ही होगी। पण्डितजी की चार पुत्री भी हैं जो मुज्जफरनगर, दिल्ली, हरिद्वार एवं देहरादून में रहती हैं। उनके दामाद श्री केशवदेवजी आदि पक्के मुमुक्षु हैं।

आज भी पण्डितजी जबकि 100 वर्ष के आसपास पहुँच चुके हैं और इन्द्रियाँ पूर्ण शिथिल हो गई हैं, स्मृति भी कम हो गई है, तथापि पाठकों को यह जानकर आश्चर्य होगा कि आदरणीय स्व. खीमचन्दभाई के निम्न बोल वे अभी भी निरन्तर याद तो रखते ही हैं, समय-समय पर दूसरों के प्रेरणा हेतु अपनी टूटी-फूटी वाणी से भी व्यक्त करते रहते हैं। वे बोल हैं – **'स्व में बस, पर से खस, आयेगा अतीन्द्रिय आनन्द का रस, इतना कर तो बस.....।'**

ऐसे परम आदरणीय पण्डित कैलाशचन्द्रजी अमर रहें, उनकी वाणी इसी तरह गूंजती रहे और वे हम सबको प्रेरणाश्रोत बने रहें – मेरी उनके लिये यह मंगल कामना है।

इस अवसर पर मैं उस पवित्र तीर्थधाम मङ्गलायतन और अद्‌भुत शिक्षा केन्द्र मङ्गलायतन विश्वविद्यालय की चर्चा किये बिना भी नहीं रह सकता जो आज विश्व की एकमात्र अद्वितीय शिक्षा का केन्द्र तो है ही; धर्म का केन्द्र भी बनी हुई है। जहाँ भगवान जिनेन्द्रदेव की वाणी तो गूंजती ही है, उन्हीं वाणी के प्रसारक पूज्य गुरुदेव श्री कानजीस्वामी की वाणी भी निरन्तर मोक्षमार्ग में आगे बढ़ने की प्रेरणा देती रहती है।

इस शिक्षा केन्द्र की स्थापना का श्रेय आदरणीय पण्डित श्री कैलाशचन्द्रजी के एकमात्र सुपुत्र श्रीयुत पवनकुमारजी को जाता है, जिन्होंने तन, मन, धन एवं अपना जीवन लगाकर इस पौधे को पल्लवित, पुष्पित और फलित किया है, जो चिरकाल तक अपने नाम को सार्थक करती हुई जो जैनाजैन छात्रों के सदाचारमय जीवन का निर्माण कराते हुए लौकिक शिक्षा के साथ जिनवाणी के प्रचार-प्रसार में अग्रसर रहेगी। आदरणीय श्री पवनजी स्वयं कहते हैं – मङ्गलायतन विश्वविद्यालय में पढ़नेवाले और वहाँ के छात्रावास में रहनेवाले जैनाजैन छात्र, पानी तो छानकर काम में लेते ही हैं, नित्य देवदर्शन करते हैं। माँस, अण्डा आदि अभक्ष्य भक्षण नहीं करते।

श्री पवनकुमारजी के माध्यम से अलीगढ़ में पहले तीर्थधाम मङ्गलायतन की वृहद

मङ्गल समर्पण

पञ्च कल्याणक प्रतिष्ठा दिनांक 31 जनवरी से 06 फरवरी 2003 में हुई तथा दूसरी बार मङ्गलायतन विश्वविद्यालय में विशाल दिगम्बर जैन मन्दिरजी की पञ्च कल्याणक प्रतिष्ठा 16दिसम्बर से 23 दिसम्बर 2010 में विश्वविद्यालय परिसर में हुई। पहली प्रतिष्ठा के समय अस्वस्थ होने पर मैं नहीं जा सका, पर दूसरी विश्वविद्यालय परिसर में हुई प्रतिष्ठा का मैं प्रत्यक्ष साक्षी रहा हूँ।

दोनों ही प्रतिष्ठायें अभूतपूर्व हुईं, जिनमें देश-विदेश से भारी संख्या में आत्मार्थीजन पधारे थे तथा उक्त प्रतिष्ठाओं की सफलता से ही अनुमान लगाया जा सकता है कि मङ्गलायतन की प्रति लोगों में कैसी-कितनी आस्था होगी ?

तीर्थधाम मङ्गलायतन केवल धार्मिक आस्था का केन्द्र है, साथ ही यह अध्यात्म जागृति और तत्त्वज्ञान के प्रचार-प्रसार का भी बहुत बड़ा केन्द्र है। यहाँ धार्मिक शिक्षा भी दी जाती है तथा वहाँ से भी अच्छे प्रवचनकार विद्वान तैयार होते हैं। सभी छात्र धार्मिक भावनाओं से ओत-प्रोत निकलते हैं।

प्रसन्नता की बात यह है कि अभी श्रीयुत अशोककुमारजी लुहाड़िया, देवेन्द्रकुमारजी बिजौलिया, संजय शास्त्री, एवं सुधीरजी, जबलपुर जैसे प्रतिभाशाली विद्वान समर्पितभाव से सेवारत हैं। जो समय-समय पर देश-विदेश में जाकर तत्त्व प्रसार की गतिविधियों में सक्रिय रहते हैं। इनमें देवेन्द्रजी को छोड़कर, तीनों विद्वान हमारे ही भूतपूर्व विद्यार्थी हैं।

हमारे लिए गौरव का विषय यह है कि प्रत्येक शिक्षा केन्द्र में चाहें वह बांसवाड़ा हो, सोनागिर हो, देवलाली हो, द्रोणगिरि हो, सोनगढ़ हो, उज्जैन हो, बाहुबली कुम्भोज और श्रवणबेलगोला हो, प्राय: सभी जगह हमारे यहाँ से श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय, जयपुर से निकले भूतपूर्व विद्वान ही कार्य कर रहे हैं।

मङ्गलायतन विश्वविद्यालय परिसर में ही एक वृहद जिनालय स्थापित कर आपने अद्भुत कार्य किया है, वह निश्चय अपूर्व है, इसके माध्यम से मङ्गलायतन विश्वविद्यालय पढ़नेवाला प्रत्येक विद्यार्थी जो भले ही किसी भी जाति का हो, नि:सन्देह जैनत्व के संस्कारों से अनुप्राणित होगा। इस काम के लिए आदरणीय श्री पवनजी सपरिवार सदैव स्मरण किये जाते रहेंगे - मुझे ऐसा पूरा विश्वास है और यही मेरी मंगल कामना है कि यह कार्य और इसके कर्ता अमर रहें।

अन्त में मैं आदरणीय पण्डित कैलाशजी के एवं श्रीयुत पवनजी के लम्बे जीवन की

कामना करता हूँ। वे शतायु हों और अपने पूज्य पिताश्री कैलाशजी की भावना एवं पुरुषार्थ प्रेरक जीवन के अनुसार अपने एवं परिवार के जीवन को सफल, सार्थक करते हुए धर्मध्वजा फहराने में सदैव अग्रसर रहें।

यद्यपि आदरणीय भाई श्री पवनजी भी शारीरिक दृष्टि से अस्वस्थ हैं, तथापि प्रबल इच्छा शक्ति से वे धार्मिक गतिविधियाँ चलाने में सदैव अग्रसर रहे हैं। दूरदृष्टि से विचार कर उन्होंने अपने उत्तराधिकारी के रूप में चिरंजीवी स्वप्निल को तीर्थधाम मङ्गलायतन तथा मङ्गलायतन विश्वविद्यालय की देखरेख में भलीभाँति निपुण कर दिया है। वे भलीभाँति देख-रेख करते रहेंगे – ऐसी आशा है। वे भी स्वस्थ और दीर्घजीवी हों – यही मंगल कामना है।

सब उन्हीं का प्रताप है

— पण्डित रजनीभाई दोशी, हिम्मतनगर

पूज्य गुरुदेव के अनन्य भक्त पण्डित कैलाशचन्द्रजी हमारे हिम्मतनगर जिनमन्दिर में अनेकों बार धार्मिक कक्षाओं हेतु पधारे थे। उन्हीं की प्रेरणा से हमारे यहाँ स्वाध्याय की विशेष परम्परा शुरु हुई। आज भी हमारे यहाँ के जिनमन्दिर में पण्डितजी के द्वारा चयनित वाक्य दीवारों पर उत्कीर्ण किये गये हैं। हमारे मण्डल पर पण्डितजी का बहुत-बहुत उपकार है। वे जब भी यहाँ कक्षा लेने हेतु पधारते सबको बहुत वात्सल्य और प्रेम से पढ़ाते थे। उन्होंने पूज्य गुरुदेवश्री के तत्त्वज्ञान को बिना किसी लाग-लपेट के जनमानस को परोसा है। उनकी प्रेरणा से हमारे गुजरात प्रान्त में भी काफी जागृति आयी है। यदि मैं यह कहूँ तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि आज हम लोग जो तत्त्वज्ञान की चर्चा-वार्ता करने योग्य हुए हैं, उसमें पण्डितजी का बहुत बड़ा योगदान है।

पण्डितजी की प्रेरणा से स्थापित तीर्थधाम मङ्गलायतन और उनकी प्रेरणा से ही प्रकाशित सत्साहित्य हमें युगों-युगों तक तत्त्वज्ञान का सन्देश देता रहे – इसी भावना से महामनीषि के जन्म-शताब्दी के उपलक्ष्य में सादर विनयांजलि समर्पित करते हुए स्वस्थ एवं मङ्गलमय जीवन की भावना भाता हूँ।

डण्डावाले पण्डितजी

—**डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल,** जयपुर

'डण्डावाले पण्डितजी' के नाम से प्रसिद्ध विद्वान पण्डित कैलाशचन्दजी बुलन्दशहर मूलत: पण्डित नहीं, अपितु एक सद्गृहस्थ व्यापारी रहे हैं। आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के सत्समागम से वे एक सच्चे आत्मार्थी मुमुक्षु बन गये। अपनी युवावस्था में ही व्यापारादि कार्यों से पूर्णत: निवृत्त हो, आध्यात्मिक ग्रन्थों के स्वाध्याय के लिए ही सम्पूर्णत: समर्पित हो गये। पूज्य गुरुदेवश्री के रहस्योद्घाटक प्रवचनों और आदरणीय आत्मार्थी विद्वान पण्डित खीमचंदभाई की कक्षाओं ने उन्हें वीतरागी तत्त्वज्ञान का मर्मज्ञ बना दिया।

खीमचन्दभाई के सभी बोल उन्हें आज भी सदा उपस्थित रहते हैं, उनकी डायरी में नोट हैं; जिसके आधार पर उन्होंने जैन सिद्धान्त प्रश्नोत्तरमालाओं के रूप में व्यवस्थित कर दिया। जिसे बाद में उनके सुपुत्र श्री पवन जैन ने एक विशाल ग्रन्थ के रूप में व्यवस्थित कर प्रकाशित किया। प्रकाशित होने के पूर्व बड़ी साइज में सहस्राधिक पृष्ठ के उस विशाल ग्रन्थ का मैंने आद्योपान्त अवलोकन किया, अध्ययन किया; अपितु उसमें आवश्यक संशोधन भी किये।

अपनी धुन के धनी पण्डित कैलाशचन्दजी आज 100 वर्ष की उम्र में भी आत्मकल्याण में अत्यन्त उपयोगी बोलों को निरन्तर दुहराते रहते हैं। यद्यपि आज वे सुनते कम हैं, और सभी को आसानी से पहिचान भी नहीं पाते, स्मृति क्षीण हो गयी है, तथापि तत्त्वज्ञान सम्बन्धी धारणा में कोई अन्तर नहीं आया। आवाज भी पहले जैसी बुलन्द है। आज भी जब उनसे कुछ बोलने के लिए कहा जाता है तो उनके मुख से यही निकलता है कि **पर से खस, स्व में बस, आयेगा आत्मा का अतीन्द्रिय रस, इतना कर तो बस।**

वे स्वयं तो निरन्तर अध्ययनरत रहते ही हैं, साथ में सम्पूर्ण भारतवर्ष में गाँव-गाँव में जाकर मुमुक्षु भाई-बहिनों को जैनदर्शन के मूल सिद्धान्तों का अध्ययन कराते रहे हैं; इस कारण लोग उन्हें पण्डितजी कहने लगे थे। यद्यपि उन्हें लाठी रखने की खास आवश्यकता नहीं थी, तथापि वे हाथ में एक डण्डा रखते थे। यद्यपि उन्होंने उस डण्डे का उपयोग अपने किसी छात्र को मारने-पीटने में कभी नहीं किया; पर वे डण्डे को फटकारते अवश्य रहते; इस कारण डण्डेवाले पण्डितजी के नाम से प्रसिद्ध हो गये थे। वे जो कुछ पढ़ाते थे, उसे पूरी तरह सभी को याद करा देते थे।

इन दिनों जब भी मैं उनसे मिला तो एक बात अवश्य कहते हैं कि इस पवन को समझाओ कि इन बाहर की प्रवृत्तियों से कुछ नहीं होगा। जो कुछ किया है, सो बहुत अच्छा; पर

आत्मा का कल्याण इनसे होनेवाला नहीं है; उसके लिए तो अन्तरोन्मुखी पुरुषार्थ करना होगा, समयसारादि ग्रन्थों का गहरा अध्ययन-मनन-चिन्तन करना होगा।

उनके उक्त विचारों को जानकर उनके अन्तर की भावना समझ में आती है कि वे स्वयं तो निरन्तर आत्मचिन्तन में रहते ही हैं, आसपास के लोगों को भी प्रत्यक्ष-परोक्षरूप से तदर्थ प्रेरित करते रहते हैं।

मुझे तो उनका अगाध वात्सल्य सदा ही प्राप्त रहा है। उनके पुत्र पवन जैन और पौत्र स्वप्निल जैन से भी मेरा सदा रहनेवाला असीम वात्सल्यभाव है। उनकी ओर से भी साधर्मी वात्सल्यभाव में कोई कमी नहीं है।

पण्डितजी के इस शताब्दी समारोह के अवसर पर मैं उन्हें अत्यन्त प्रमोदभाव से नमन करता हूँ और उनके आत्मरत दीर्घ जीवन की मङ्गल कामना करता हूँ।

जैनदर्शन के मनीषी विद्वान

— **सुमतकुमार जैन,** प्रधान सम्पादक
दिगम्बर जैन महासमिति पत्रिका, सासनी (उत्तरप्रदेश)

सादा जीवन, उच्च विचार की साक्षात् प्रतिमूर्ति, पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के अनन्य भक्त एवं समर्पित शिष्य 99 वर्षीय वयोवृद्ध मनीषी विद्वान श्रीमान् पण्डित कैलाशचन्द्र जैन ने 50 वर्षों से अधिक तत्त्वज्ञान का सम्पूर्ण देश में प्रचार-प्रसार कर एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया है, एक प्रेरणा दी है। भगवान महावीर के सिद्धान्त 'मनुष्य जन्म से नहीं, कर्म से महान बनता है' को साक्षात किया है। आपका दीर्घकालीन स्वप्न, तीर्थधाम मङ्गलायतन के रूप में जैनधर्म के मर्म छहढाला के रचयिता महाकवि पण्डित दौलतराम की जन्मभूमि, कर्मभूमि सासनी में साकार हो चुका है।

आपकी शिक्षा के प्रति विशेष अभिरुचि की परिणति सीनियर सेकेण्डरी डी.पी.एस पब्लिक स्कूल, अलीगढ़ स्वयं दृष्टिगत है। जैन आचारों और संस्कृति की छाप का मङ्गलायतन विश्वविद्यालय आपकी प्रेरणा का ही सुफल है। आपकी लेखनी से प्रसूत श्री जैन सिद्धान्त रत्नमाला (आठ खण्ड) तथा आपकी प्रेरणा से रचित 'जिनागमसार' भावी पीढ़ी का दिशाबोध करते रहेंगे।

आपकी असाधारण समर्पणभाव से श्रमण संस्कृति की सेवा के प्रति सकल दिगम्बर जैन समाज आपका उऋणी है, तथा आपके स्वस्थ एवं दीर्घजीवी होने की कामना करता है।

सद्भावना सहित,

माँ जिनवाणी के सच्चे सपूत व गुरु कहान के अनन्यभक्त विद्वत्रत्न पण्डित कैलाशचन्द्रजी

— 'जैनरत्न' वाणीभूषण पण्डित ज्ञानचन्द जैन
कुन्दकुन्दनगर, सोनागिर (मध्यप्रदेश)

वीतरागी-सर्वज्ञ-हितोपदेशी सच्चे देवरूपी हिमाचल से निकली आध्यात्मिक चार अनुयोगमयी ज्ञानगंगा, गुरु गौतम के मुख से होती हुई श्री कुन्दकुन्दादि महान समर्थ दिगम्बर सन्तों के माध्यम से, बीसवीं सदी के महान आध्यात्मिक सन्त पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी को प्राप्त हुई; जिन्होंने स्वयं तो ज्ञानामृतरस का पान किया ही; साथ ही साथ सम्पूर्ण देश-विदेश के लाखों भव्य जीवों को भी उस तत्त्वज्ञान से निहाल कर दिया।

उन्हें एक समयसार मिला; उन्होंने लाखों समयसार जन-जन तक पहुँचा दिये...

उन्हें एक मोक्षमार्गप्रकाशक मिला; उन्होंने लाखों मोक्षमार्गप्रकाशक जन-जन तक पहुँचा दिये....

उन्हें एक छहढाला (लघु समयसार) मिला, उन्होंने उसे जन-जन के कण्ठ का हार बना दिया और यही कारण है कि उनकी ज्ञानामृत वीतरागवाणी को सुनकर, सत्य सनातन जिनधर्म को हृदयंगम कर सैकड़ों अध्यात्मरसिक विद्वान तैयार हो गये, जिनमें से एक उच्चकोटि के विद्वत्रत्न, माँ जिनवाणी के सच्चे सपूत बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी 99 वर्षीय पण्डित कैलाशचन्द्रजी बुलन्दशहरवाले अलीगढ़ है...

आज से लगभग 55 वर्ष पूर्व 1958में जब मैं बीस वर्ष की वय में था और मेरी दर्शन/पूजन षट् आवश्यक के साथ-साथ आध्यात्मिक/तत्त्वज्ञान की रुचि जागृत हुई और सर्व प्रथम बार स्वर्णपुरी सोनगढ़ जाना हुआ और निरन्तर जाने लगा, वहीं पण्डितजी साहब श्री कैलाशचन्द्रजी साहब से परिचय हुआ और हम साथ-साथ रहकर गुरुवाणी द्वारा प्रवचन एवं शिक्षण कक्षाओं का लाभ लेकर अपने को धन्य-धन्य अनुभव करने लगे...।

मेरी ही तरह पण्डितजी साहब ने भी पूज्य गुरुदेवश्री से भी आध्यात्मिक तत्त्वज्ञान हृदयंगम किया, उसे जन-जन तक पहुँचाने के लिए अपना कार्यक्षेत्र सम्पूर्ण भारतवर्ष बनाया और एकमात्र लक्ष्य भेदविज्ञानपूर्वक सम्यग्दर्शन करना और सभी को यही करने की प्रेरणा देना और इसके लिए उन्होंने समयसार, मोक्षमार्गप्रकाशक, छहढाला आदि महत्वपूर्ण ग्रन्थों का गहन अध्ययन करके जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला के सात भागों को तैयार किया, जो कि

नि:शुल्क जैसे अति अल्पमूल्य में जन-जन तक पहुँचाए ही नहीं, अपितु प्रत्येक प्रान्त, प्रत्येक जिले एवं प्रत्येक छोटे-बड़े गाँव में स्वयं जाकर आठ-आठ, पन्द्रह-पन्द्रह दिन अथवा महिनों रहकर जैनदर्शन की ए.बी.सी.डी. द्रव्य-गुण-पर्याय, छह द्रव्य, सात तत्त्व, नव पदार्थ, त्रिकर्मों से भिन्न 'ज्ञायक' तथा मकान-दुकान, माता-पिता, भाई-बहिन, पत्नी बच्चे सभी से प्रत्यक्ष भेदविज्ञान कराते हुए अपने श्रोताओं को सम्यग्दर्शन की प्रेरणा दी। उनकी कक्षा में किसी भी श्रोता को तनिक भी आलस/प्रमाद नहीं आ सकता, सोने की बात तो दूर... उपयोग जरा बाहर जाए तो वह वहीं तेजी से डण्डा बजा देते थे।

सन् 1960 से 1990 तक तीस वर्ष मानों उनके सातों भागों का उसके माध्यम से जिनागम के सिद्धान्तों को हृदयंगम कराने का ऐसा दौर चला, फलस्वरूप उनके प्रोग्राम वर्ष भर सुनिश्चित रहते थे और सम्पूर्ण भारतवर्ष के तत्त्वजिज्ञासु सुनने को आतुर रहते थे। प्रात: पाँच बजे से तीनों समय व्यवस्थित कक्षाएँ चलना, प्रेक्टिकल देह-कर्म-राग से भिन्न, आत्मा के भेदविज्ञान की धुन लगना... अनादि-निधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न... अपनी-अपनी मर्यादासहित परिणमती हैं... आदि की रटन लगाना और अभेद का लक्ष्य कराना बड़ी महत्वपूर्ण बात है।

उनके सुयोग्य इकलौते लाड़ले सुपुत्र श्री पवन जैन से सामान्यत: मुमुक्षु समाज अपरिचित था। कोई भी जानता नहीं था। जब सर्व प्रथम बार 'जिनागमसार' बृहद ग्रन्थ प्रकाशित हुआ और सम्पूर्ण देश-विदेश में भेजा गया तो श्री पवनजी का उसके माध्यम से सभी को परिचय हुआ...। यथानाम तथाकाम की तरह श्री पवनजी ने जिस वायु (हवा) की तरह लौकिक क्षेत्र में अनेकों ऊँचाईयाँ को छूकर नाम किया और क्षणभर में पूज्य पिताश्री की प्रेरणा से अपने अमूल्य जीवन को बदलकर वीतरागमार्ग में समर्पित कर, पण्डितजी की भावना को साकार करने हेतु 'तीर्थधाम मङ्गलायतन' एवं 'मङ्गलायतन विश्वविद्यालय' का निर्माण कर एवं विद्यालय खोलकर सैकड़ों/हजारों वर्षों तक जिनधर्म का ध्वज फहरते रहने का काम जो अनेक पुत्र नहीं कर सकते, वह एक सुपुत्र ने कर दिया। आज पण्डितजी यह सब देखते हैं तो फूले नहीं समाते...।

पण्डितजी भी वर्षों तक पवनजी के पास नहीं रहे; बोले जब तुम जिनधर्म मार्ग पर लगोगे, तब मैं तुम्हारे पास आऊँगा और वह उत्तम समय शीघ्र आ गया। आज दर्जनों संकुलों में 'मङ्गलायतन' का नाम अपने आपमें विशेष है। मेरा सौभाग्य है कि मेरे दोनों सुपुत्र डॉ. विनोद 'चिन्मय', डॉ. मुकेश 'तन्मय', पण्डित टोडरमल स्मारक भवन जयपुर में अध्ययन किया तथा

मेरे दोनों पोते संगम जैन सी.ए. एवं सागर जैन इंजी. ने तीर्थधाम 'मङ्गलायतन' में रहकर आध्यात्मिक तत्त्वज्ञान के संस्कार लेते हुए डी.पी.एस. में लौकिक अध्ययन में भी विशेष स्थान प्राप्त किया।

आदरणीय पण्डितजी के सम्बन्ध में विशेष क्या लिखूं; वह मेरे से 23 वर्ष बड़े हैं, मेरी तरह सादा जीवन, निर्भीक कठोर होते हुए भी कोमल हृदयी, सरल सुबोध शैली में आध्यात्मिक तत्त्वज्ञान को जन-जन के हृदय में उतार दिया, यह आपका ही प्रताप है जो आज नये-नये मुमुक्षु तैयार हुए और आगे धर्म प्रभावना निरन्तर बढ़ रही है। आपकी आत्मसाधना इसी प्रकार वृद्धिंगत हो, आपके अन्दर में जो भेदज्ञानधारा चलती है, वह सभी को सम्यग्दर्शन में प्रेरक बनी रहे - यही भावना है।

धर्मरथ के सारथी

— दिलीपभाई शाह

अहिंसा चैरिटेबिल ट्रस्ट, जयपुर

पूज्य गुरुदेवश्री के अनन्यतम शिष्यों में पण्डित कैलाशचन्द्रजी का नाम प्रमुखरूप से शामिल है। सादा जीवन-उच्च विचार की प्रतिमूर्ति पण्डितजी को देखकर कोई भी यह अनुमान नहीं लगा सकता कि इस दुबली-पतली काया में प्रचण्ड आत्मा निवास कर रहा है। हमने अनेकों बार बम्बई तथा जयपुर में पण्डितजी की कक्षाओं का लाभ लिया है और जब भी तीर्थधाम मङ्गलायतन आने का अवसर प्राप्त हुआ तब पण्डितजी से मिलकर जो आत्मीय आनन्दानुभूति हुई उसका उल्लेख शब्दों में करना असम्भव है। वास्तव में पण्डितजी जैसे निस्पृह व्यक्तियों से ही जिन शासन की प्रभावना की गौरवमयी परम्परा चल रही है और पंचम काल के अन्त तक अनवरतरूप से चलती रहेगी।

मैं अध्यात्म मनीषी के जन्म-शताब्दी महोत्सव के अवसर पर उनके चरणों में अपने शत-शत अभिवन्दन समर्पित करते हुए उनके आत्मश्रेय की मङ्गल भावना भाता हूँ।

पण्डित श्री कैलाशचन्दजी (बुलन्दहशरवाले) : एक आदर्श जैन धर्माध्यापक

— **बाल ब्रह्मचारी हेमचन्द जैन 'हेम',** भोपाल / देवलाली

बीसवीं शताब्दी के क्रान्तिकारी सन्त आध्यात्मिक सत्पुरुष श्री कानजीस्वामी (1890-1980 ईस्वी) के अनन्य भक्त शिष्य पण्डित श्री कैलाशचन्द जैन (बुलन्दशहरवाले) को भारत का सम्पूर्ण मुमुक्षु जैन समाज जानता है। विशेषकर हिन्दी-गुजराती भाषा-भाषी प्रान्तों के प्राय: सभी स्वाध्याय प्रेमी मुमुक्षुजन (चाहे वे जन्मजात दिगम्बर जैन हों या श्वेताम्बर जैन हों) सभी पण्डितजी को 'डण्डेवाले पण्डितजी के' नाम से पहिचानते हैं, क्योंकि उन्होंने पूज्य गुरुदेवश्री से प्राप्त वीतरागी तत्त्वज्ञान को सम्पूर्ण देश में, गाँव-गाँव जा-जाकर, कक्षापद्धति से पढ़ाया-सिखाया-समझाया है। आने-जाने का मार्ग-व्यय भी नहीं लेते थे और पूरे वर्ष भर नि:स्वार्थभाव से प्रसन्न चित से 90 वर्ष की उम्र तक तत्त्वप्रचार-प्रसार करते रहे, मानो वे अपने विद्यागुरु श्री कानजीस्वामी से प्राप्त तत्त्वज्ञान के ऋण को जन-जन में बाँट कर चुका रहे हों। आज वे 98वर्ष की अति वयोवृद्ध अवस्था में भी जागृत उपयोग हैं; यह एक सुखद बात है।

आदरणीय पण्डितजी ने पूज्य स्वामीजी से प्राप्त तत्त्व को तथा सोनगढ़ के 'आत्मधर्म रूप धर्मरथ' को दो पहियों स्वरूप दो उद्भट् विद्वानों स्व. श्री रामजीभाई माणेकचन्द दोशी एवं स्व. श्री खीमचन्दभाई जे. सेठ से उनकी कक्षाओं के माध्यम से प्राप्त तत्त्वज्ञान को भलीभाँति आत्मसात कर, उस तत्त्वज्ञान को 'जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला' के सात भागों के रूप में लिपिबद्ध कर प्रकाशित करा दिया और सर्व दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डलों में इन पुस्तकों के माध्यम से जैनधर्म का अध्ययन कराते रहे।

मुझे बचपन से ही निसर्गत: जैनधर्म की गहराई से जानने की रुचि थी और सद्भाग्य से भोपाल में इंजीनियरिंग की पढ़ाई के समय 19 वर्ष की उम्र में सन् 1966में 'आत्मधर्म' पत्रिका में प्रकाशित समाचार को पढ़ा कि सोनगढ़ में मात्र छात्रों के लिये प्रथम बार ग्रीष्मकालीन डेढ़ माह की अवधिवाले जैनधर्म शिक्षण शिविर लगाया जा रहा है, उसको अटैण्ड करने में अकेले ही सागर से सोनगढ़ पहुँच गया और वहाँ पूज्य गुरुदेवश्री के प्रवचनों का एवं स्व. बापूजी श्री रामजीभाई, स्व. श्री खीमचन्दभाईजी की कक्षाओं का तथा प्रात:कालीन पण्डितश्री कैलाशचन्दजी की कक्षाओं का पूरा-पूरा लाभ लिया। पश्चात् पुन: 1969 में सोनगढ़ में ग्रीष्मकालीन डेढ़ माह की अवधिवाले द्वितीय शिक्षण शिविर को अटैण्ड किया। उसमें लाभ

लेने हेतु भाई पण्डित श्री उत्तमचन्दजी (उम्र 20 वर्ष) सिवनी को पत्र डालकर बुला लिया। श्री पण्डित अभयकुमार जबलपुर (उम्र 16वर्ष) भी उस शिविर में थे ही। इस प्रकार हम तीनों छात्रों को 'सोनगढ़ की हवा' (अध्यात्म ज्ञान की तत्त्व रुचि) लग गयी, जिसका पोषण आदरणीय पण्डितश्री कैलाशचन्दजी (बुलन्दशहरवाले) ने प्रातः 04 बजे हम लोगों को विशेषरूप से अपने डण्डे से जगाकर पढ़ाया और उस तत्त्वज्ञान की नींव पक्की कर दी। पूज्य गुरुदेवश्री के प्रवचनों में जो गम्भीर सूक्ष्मतत्त्व विवेचना आती थी, उसका मर्म उपर्युक्त विद्वानत्रय (श्री रामजीभाई, श्री खीमचन्दभाई व श्री कैलाशचन्दजी) हम सब छात्रों को सोदाहरण शंका-समाधान पूर्वक समझाते थे। अतएव हम पूज्य गुरुदेवश्री के अनन्त उपकार के साथ-साथ, इन तीन विद्वत्रत्नों के महान् उपकार को भी कभी भुला नहीं सकते।

आदरणीय पण्डितश्री कैलाशचन्दजी हम सभी को कहते थे - जो आचार्यकल्प पण्डित टोडरमलजी के मोक्षमार्गप्रकाशक को एवं श्री कानजीस्वामी के प्रवचनों को भलीभाँति समझ लेगा तो वह अवश्य अल्प काल में मोक्ष प्राप्त कर लेगा और जो अज्ञानवश इन दोनों का विरोध ही करता रहेगा तो वह शीघ्र ही त्रस पर्यायें पूर्ण कर वापिस निगोद चला जायेगा। पण्डित कैलाशचन्दजी तत्त्वों की हास्य-व्यंग्यपूर्ण मजाक उड़ानेवालों को डाँटा करते थे - 'निगोद जाना है क्या ?' तब हम जैनधर्म की इतनी गम्भीरता व सूक्ष्मता नहीं समझते थे, किन्तु आज पण्डितजी की पढ़ाई हुई वे सब बातें एवं स्व. श्री खीमचन्दभाई जे. सेठ के बोल (1) 'एकं भज, सर्वं त्यज, कर ज्ञान-दर्शन का वणज, हट जायेगी कर्मों की रज, तू जायेगा मोक्ष से सज।' (2) 'स्व में वस, पर से खस, आयेगा अतीन्द्रिय रस, ये है आध्यात्मिक कश, इतना कर तो बस।' - हमारे मानस पटल पर सदैव के लिये टंकोत्कीर्ण हो गये हैं।

आदरणीय पण्डित कैलाशचन्दजी को न जाने क्यों अगाध विश्वास था कि वे जो कुछ प्रश्नोत्तर आदि लिखते थे, उसे छपाने से पूर्व प्रायः मुझ से कहा करते थे कि हेमचन्द इसे एक बार देख ले - कहीं आगमिक या आध्यात्मिक भाषा या भावों की गड़बड़ी तो नहीं है। विशेषकर जब उन्होंने तीन छहढालाओं का संग्रह किया - जिसमें वर्तमान प्रचलित पण्डित श्री दौलतरामजी कृत छहढाला के अलावा पण्डित श्री द्यानतरायजी कृत एवं पण्डित श्री बुधजनजी कृत छहढालाओं को साथ प्रकाशित किया जाना था, उसे मुझे जाँच-देख लेने को कहा कि इसमें कोई शब्द, अर्थ आदि की भूल तो नहीं रह गयी है, तू देख ले। वे भोपाल जब अन्तिम बार सन् 1989-90 में एक माह के लिये आये थे, तब मैंने उनके द्वारा पण्डित

बुधजनजी कृत छहढाला के लिखे गये अर्थ आदि को ध्यान से जाँचा-देखा था। बाद में उनका प्रकाशन हुआ या नहीं, यह विदित नहीं हुआ। यदि तीनों छहढालाओं का अर्थ सहित प्रकाशन अभी तक न हुआ हो, तो उसका प्रकाशन किया जाना चाहिए।

मङ्गलायतन के 2003 में हुए प्रथम पञ्च कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के अवसर पर तो पण्डितजी स्वस्थ थे और उनसे वार्तालाप हो जाता था, परन्तु अभी 'मङ्गलायतन विश्वविद्यालय' के दिसम्बर 2010 में हुए द्वितीय पञ्च कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के अवसर पर उनसे मात्र अभिवादन स्वरूप जयजिनेन्द्र ही हो पाता था, कुछ वार्तालाप नहीं हो सकता था। उनकी ९8वर्ष की अवस्था में पराधीन मति-श्रुतज्ञानरूप स्मरणशक्ति घट चुकी है, तथापि वे मुस्करा कर अभिवादन स्वीकार कर लेते हैं। इससे उनके अन्दर जागृति है - यह निश्चितरूप से जाना जा सकता है। उनके गहरे आध्यात्मिक संस्कार निकट भविष्य में उनको रत्नत्रय की पूर्णता कराकर मोक्षलक्ष्मी की प्राप्ति करा देंगे - इसमें दो राय नहीं हैं। वे शारीरिक स्वास्थ्य लाभ प्राप्त करें और उनकी तात्त्विक ज्ञानचेतना पूरी तरह जागृत बनी रहे - यही उनके प्रति मेरी मङ्गल कामना है।

अध्यात्मक्रान्ति के सूत्रधार

— गांगजीभाई

श्रीमद् राजचन्द्र साधना केन्द्र, कूकमा, भुज

पण्डित कैलाशचन्द्रजी जैन से मेरा परिचय तब हुआ जब हम अपना यात्रासंघ लेकर तीर्थधाम मङ्गलायतन के मनोहारी वातावरण में पहुँचे। तत्पश्चात् तो मङ्गलायतन से ऐसा वात्सल्य पूर्ण प्रेम जुड़ गया कि हमने हमारे यहाँ निर्मित जिनमन्दिर की पञ्च कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव तीर्थधाम मङ्गलायतन के निर्देशन में सम्पन्न करायी। उसी की प्रेरणा पाकर हमें पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी की वाणी का भी रस लगा और आज हमारे जिनमन्दिर में प्रतिदिन एक घण्टे स्वामीजी के सी.डी. प्रवचन चलते हैं। तीर्थधाम मङ्गलायतन में ही पण्डित कैलाशचन्द्र जैन के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ। अन्तर्बाह्य सहजता, सरलता के दर्शन उनके व्यक्तित्व में हमें हुए जिससे हम अत्यन्त प्रभावित हुए। ऐसे महामनीषी के जन्म-शताब्दी के उपलक्ष्य में हमारे मण्डल की ओर से अनेक-अनेक बधाईयाँ, स्वीकार करें।

दानी या त्यागी

— प्रतिष्ठाचार्य बाल ब्रह्मचारी अभिनन्दनकुमार शास्त्री
पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट, देवलाली (नासिक)

मोक्षमार्गप्रकाशक ग्रन्थ, पृष्ठ 52 की लाइनें 'अनादि निधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं, काई किसी के आधीन नहीं, कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती' - जब भी पढ़ने का अवसर आता है, उसी समय आदरणीय पण्डितजी साहब कैलाशचन्दजी बुलन्दशहरवाले याद आते हैं, क्योंकि उनसे तीन-तीन बार पढ़ने का सौभाग्य मिला है। खानियांधाना, भोपाल एवं श्री टोडरमल महाविद्यालय जयपुर में। समाज में प्राय: दानवीर उसे कहते हैं, जिसने समाज के हित में दान देकर अपनी चंचला लक्ष्मी का सदुपयोग किया है। जिस जड़ लक्ष्मी को गुरुदेवश्री कानजीस्वामी धूल कहते थे, परन्तु जिसने निस्पृहभाव से केवल गुरुदेवश्री से तत्त्वोपदेश सुनकर-समझकर-हृदयगंम कर जन-जन के कण्ठ में उतारा है, दिल खोलकर प्रमुदित मन से खूब -खूब बाँटा है, क्या वह ज्ञानदान देनेवाला दानी नहीं है ? अरे, यह तो महान दान है, जिसके यथार्थ प्राप्त किये बिना, संसारसमुद्र से पार नहीं हो सकते। 'ज्ञान समान न आन जगत में सुख कौ कारन, यह परमामृत जन्म-जरा-मृत रोग निवारण' (छहढाला)। इसलिए मैं तो पण्डितजी साहब को **महान दानी** समझता हूँ। जिन्होंने किसी से फ्री में एक पोस्टकार्ड लेने की भी अपेक्षा नहीं रखी। उस समय सात-आठ नये पैसे का पोस्टकार्ड आता था, किसी से मंगवाते थे तो पैसा तुरन्त देते थे, न लेने पर कार्ड फैंक देते थे और कहते थे, मुझे नहीं चाहिए ले, वापिस ले जा। विदाई के समय कुछ भेंट देने का प्रसंग आवे तो कहते थे 'मैं ज्ञान बेचने नहीं आया हूँ' - **ये हैं सोनगढ़ के आदर्श विद्वान - आदर्श दानी।**

सन् 2003 में तीर्थधाम मङ्गलायतन की प्रतिष्ठा मेरे द्वारा हुयी, उसके बाद लन्दन की पञ्च कल्याणक प्रतिष्ठा मेरे द्वारा होना निश्चित हो गया, तब बार-बार तैयारी की दृष्टि से खनियांधाना से मङ्गलायतन आने-जाने में परेशानी आयी, तब सोचा कुछ वर्षों को विधान एवं प्रतिष्ठाओं का राग कम करके, मङ्गलायतन रहने का विचार किया और पण्डित देवेन्द्रकुमार बिजौलियां से चर्चा-वार्ता द्वारा तत्त्व का भरपूर लाभ मिला। इसी बीच पण्डितजी साहब (वयोवृद्ध विद्वान पण्डित कैलाशचन्दजी अलीगढ़ से) तीर्थधाम मङ्गलायतन दर्शन को प्राय: नित्य प्रति आते और ऑफिस में कभी मैं अकेलाा बैठ मिल गया तो मुझे प्रेम से कहते 'वक्त मिला है, अपना काम कर लो, यह वक्त फिर नहीं आवेगा, सच्ची बात दिमाग में बैठ जाय, बेढ़ा

पार हो जायेगा।' (दिनाङ्क 29 मई 2007)। उस समय संभवत: आप इस नश्वर शरीर के 94 वर्ष पूरे कर चुके थे। ऑफिस में केवल मैं, पण्डितजी साहब और अखिलेश जी एकाउन्टेट थे। मेरा पण्डितजी साहब से बहुत ही अच्छा परिचय है, मेरे ऊपर उनका बहुत स्नेह है। अचानक बोले – मुझे पवन प्रति माह एक हजार रुपया खर्च को देता है, पर मैं कुछ खर्च नहीं करता, सब नौकरों को बाँट देता हूँ और एक परची पर लिखकर दिया। 'मैं अपने पास पैसा नहीं रखता हूँ' यह अक्षर उनके ही हाथ के लिखे हुए हैं। आज सभी को मालूम है, पवनजी कितने बड़े उद्योगपति हैं और उनके पिताजी की ऐसी भावना कि अपने पास एक पैसा भी नहीं रखते, पैसे से रंचमात्र भी मोह नहीं है, परिवार में भी किसी से मोह नहीं – ऐसे व्यक्ति को समाज तो त्यागी कहेगी, पर मैं तो आपको **महान त्यागी** मानता हूँ। लिखा भी है – 'गेही पै गृह में रचे ज्यों जल तें भिन्न कमल है।'

अपोलो हास्पीटल दिल्ली में जब हम 4–5 घण्टे बैठते थे, तब देखते थे कि बेहोशी के समय में भी आप लिखते रखते थे, समवसरण एवं मुनिराजों का स्मरण घण्टों तक, जब डाक्टर निरीक्षण पर आवे, हाथ पकड़े तब आप कहते थे, दो मिनिट रुको, और फिर लिखने लग गये। अभी भी आप कहते रहते हैं – अमूर्तिक प्रदेशों का पूंज, अनन्त ज्ञानादि गुणों को धारी अनादि निधन वस्तु स्वयं आप हैं। तत्त्व के ऐसे ठोस संस्कार आप में कूट–कूट कर भरे हैं, हम तो केवल भावना भाते हैं, आप जब तक इस देह में रहें, इसी प्रकार स्वरूप में सजग रहें–मस्त रहें, ज्ञायक के भानपूर्वक अन्त में देह छोड़कर शीघ्र ही थोड़े ही भवों में सिद्धालय में विराजमान हो जावें।

स्वतन्त्रता उद्घोषक व्यक्तित्व : पण्डितजी

— शास्त्री कैलाशचन्द्र जैन 'अचल'
तीर्थधाम मङ्गलायतन, अलीगढ़

'अनादिनिधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादा लिये परिणमित होती हैं, कोई किसी का कर्ता नहीं है, कोई किसी को परिणमा सकता नहीं; पर को परिणमाने का भाव मिथ्यादर्शन है।' इत्यादि महामन्त्र के रूप में प्रसिद्धि करनेवाले आदरणीय पण्डित कैलाशचन्द्रजी, बुलन्दशहर पहचाने जाते हैं। एकदम स्वतन्त्रता का ढिढ़ोरा पीटनेवाले, आपश्री ने समस्त मुमुक्षुओं को 'लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका' पर लिखे हुए 'जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला' सात भागों को ही सर्वत्र पढ़ाया है।

विश्व का प्रत्येक पदार्थ अपनी-अपनी स्वतन्त्र सत्ता लिये हुए है। 'गुण-समुदायो द्रव्यं' द्रव्य, गुणों के समुदाय को कहते हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त गुण हैं, उनकी अनन्त पर्यायें हो ही रही हैं। क्या करना है तुझे - ऐसा जानना है। तो जान लिया और हे जीव! तू इस विश्व में एक समझदार सर्वज्ञस्वभावी द्रव्य है, अन्य पाँच द्रव्य जड़स्वभावी (अन्धे) हैं स्व-पर को नहीं जानते हैं। प्रत्येक द्रव्य में अस्तित्व, वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुण रहते हैं तथा विशेष गुण अपने-अपने अनन्त है। जैसे जीव में ज्ञान-दर्शनादि अनन्त विशेष गुण; पुद्गलादि स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण; धर्म द्रव्य में गतिहेतुत्व; स्थितिहेतुत्व; अधर्म द्रव्य में आकाश द्रव्य में अवगाहनहेतुत्व; कालद्रव्य में परिणमनहेतुत्व इत्यादि प्रत्येक वस्तु में अनन्त धर्म है। जैसे सत्-असत्, तत-अतत्, नित्य-अनित्य जो सामान्य हैं और सभी द्रव्यों में पाये जाते हैं तथा शक्तियाँ भी प्रत्येक द्रव्य में अनन्त हैं। जैसे जीव में जीवत्वशक्ति, चितिशक्ति, सर्वज्ञतशक्ति, सर्वदर्शित्वशक्ति, प्रकाशक्ति, कर्ता, क्रियावतीशक्ति, कर्म करण इत्यादि अनन्त हैं तथा अन्य पाँच द्रव्यों में भी अपनी-अपनी अनन्त शक्तियाँ पायी जाती हैं।

समयसार, गाथा 3 के अनुसार एक द्रव्य, दूसरे द्रव्य को छूता भी नहीं है, तब फिर कर्ता-कर्म की या भोक्ता-भोग्य की क्या कथा! परमार्थ से देखा जाए तो इस जीव का परद्रव्यों के साथ ज्ञेय-ज्ञायक सम्बन्ध भी नहीं है; पर के साथ का ज्ञेय-ज्ञायक सम्बन्ध भी व्यवहारनय का विषय है।

चाह के बिना कोई दु:ख नहीं है और चाह अपूर्णता में होती है और विश्व कोई भी द्रव्य अपूर्ण नहीं है और मैं तो चतुर चेतन द्रव्य मैं हूँ अपने में स्वयं पूर्ण और स्वभाव से ज्ञानानन्द

स्वभावी हूँ। अत: जीव को दु:खी होने का कोई प्रसंग इस विश्व में है ही नहीं। समझदार जीव की भी एक समस्या है कि अब मैं दु:खी होऊँ तो कैसे होऊँ? क्योंकि कोई कारण ही दु:खी होने का नहीं है। अत: अब तो खबर पड़ी मैं चेतन चिदानन्द ही छायो है और कुछ नहीं भायो मुझको चिदानन्द ही छायो है। जब खबर नहीं थी तब की बात अलग थी। अब मैं दरिद्रता को याद भी नहीं करना चाहता हूँ, क्योंकि 'पानी में मीन प्यासी थी जो सुन-सुन आवे हांसी' वाली बात अब मेरे लागू नहीं पड़ती। स्वतन्त्र देश का स्वतन्त्र प्रबुद्ध सुखी स्वाधीन नागरिक हूँ।

मैं अनादि-निधन चेतन वस्तु अपनी चिदानन्द की मर्यादा लिये स्वयं चिदानन्दरूप परिणमित होता हूँ, कोई मुझे दु:खरूप परिणमा सकता है।

आपश्री का मुझ पामर पर अमाप उपकार है कि मुझे सदा सुखी, शान्त, एवं निजानन्द-चिदानन्द में रहने का मार्ग प्रशस्त किया। एतद् आपका परम उपकार मानता हुआ, आपकी जन्म शताब्दी पर सत्-सत् नमन करता हूँ।

उच्च विचारों के धनी

— दुलीचंद जैन

अध्यक्ष श्री शांतिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, खैरागढ़

पूज्य गुरुदेवश्री के आशीर्वाद से कुशल रहते हुए आपकी कुशलता सदा चाहते हैं।

इस जीवन में परम पूज्य गुरुदेवश्री का महान उपकार है। आज से करीब 40-45 वर्ष पहले आदरणीय पण्डित श्रीमान् कैलाशचन्द्रजी साहब का समागम हमें सोनगढ़ में पूज्य स्वामीजी के समक्ष हुआ। वे प्रवचन मण्डप के एक कमरे में रहते थे एवं हम प्रवचन मण्डप के हाल में पण्डित श्री हीराचन्दजी मास्टर के पास पढ़ते थे, एवं उसी हाल में आराम करते थे।

पण्डितश्री कैलाशचन्द्रजी साहब के प्रवचनों का भी लाभ हमें मिला। वे बारबार कहते थे इस मनुष्यभव में धर्म कर लो, नहीं तो निगोद जाना पड़ेगा। उनका शब्द था 'निगोद गच्छामि' एवं वे डण्डेवाले पण्डितजी के नाम से प्रसिद्ध थे।

वहाँ अर्थात् मङ्गलायतन को तो आपने पूज्य गुरुदेवश्री के आशीर्वाद से आपके उच्च विचारों से स्वर्ग जैसा अतिशयक्षेत्र बना दिया है, आपका परिवार धन्यवाद का पात्र है।

पण्डित कैलाशचन्द्रजी के प्रति.....

— ब्रह्मचारी सुमतप्रकाश जैन, खनियाधाना

शाश्वत जिनशासन को अनन्त समर्पण, आचार्य के करुणा प्रवाह को अनेकानेक नमन, पूज्य गुरुदेवश्री के प्रति कोटिश: कृतज्ञता, युगसृष्टा कानजीस्वामी प्रभावना रथों में से एक रथ के सारथी होने के सौभाग्य से गौरवान्वित अविस्मरणीय व्यक्तित्व के धनी पण्डित कैलाशचन्द्रजी साहब का शतश: आभार और इस पावन गंगा को घट-घट तक प्रवाहित करनेवाले धीमानों के स्तुत्य सतत प्रयासों को साधुवाद कौन भव्य हृदय न देना चाहेगा।

मुझे तत्कालीन युवा एवं प्रौढ़ समाज का तो ज्ञान नहीं परन्तु मेरे जैसे अनेक किशोर चंचल चित्तों के प्रवाह की दिशा बदलकर उन्हें संसार सागर में डूबने से बचाकर जिनशासन की सेवा के योग्य बना दिया। उनके जीवन की संघर्षशीलता, लघुता, सादगी, अविसंवादी जीवन नैतिक मूल्यों एवं दृढ़ श्रद्धा के धनी व्यक्तित्व आज सारे विद्वानों के लिए आदर्श हैं, उन्होंने अपने परिजनों को ही नहीं वरन जगत के सारे आत्मार्थियों को अपना पावन परिकर माना।

पारिवारिक एवं आर्थिक विसंगतिओं के बीच में भी आपने अपनी निवृत्ति तो नहीं त्यागी और न ही समाज से धन की आशा की परन्तु पोस्टकार्ड एवं किराये तक के लिए एक पैसा तक स्वीकार न किया। आपको देखकर ही लगता है आपने ज्ञानदान से धन का नहीं केवलज्ञान का व्यापार किया है। आपने कानजीस्वामी के उपदेश एवं सदासुखदासजी की वचनिका ज्ञानदान का फल केवलज्ञान होय है को अपनी वृत्ति एवं प्रवृत्ति से सार्थक कर दिया जिसका फल चिरकाल सौख्य विलास है।

भारतवर्षीय समाज को महीनों-महीनों तक आपका वात्सल्य पूर्ण शिक्षण का लाभ मिला है और आपका समाज के श्रद्धा के अक्षुण्ण पात्र बने रहना यह आपकी अन्तरंग पवित्रता, पावन निष्ठा एवं निश्छल आत्मीयता का प्रमाण है।

मेरे लिए आपका प्रदेय : जो मैं यत्किंचित ग्रहण कर सका :-

1. अल्पज्ञानी से लगाकर विचक्षण ज्ञानी तक सभी योग्यता प्रमाण जिन शासन की सेवा करते हैं, अत: ईर्ष्या त्याग कर सभी से सदा साधर्मी वात्सल्य रखो।

2. मनुष्य पर्याय की स्थिति अल्प है, शाश्वत् सुख के मार्ग का पुरुषार्थ अनन्त गम्भीर है। अत: साधर्मी या विधर्मी किसी से भी विसंवाद में समय व्यतीत मत करो।

3. स्वलक्ष्य से प्रभावना करो। अपना तन-मन-धन एवं प्रतिभा जिन-शासन की सेवा में समर्पित कर दो और उन्होंने स्वयं करके भी दिखा दिया।

4. जिज्ञासु बन कर सुनो, विद्यार्थी बन कर पढ़ाइये, आत्मार्थ की धुन जगाओ, तत्समय की योग्यता का विश्वास करो, पुण्योदय की प्रतीक्षा एवं पापोदय व्यय को बेचैन न हो, दोष त्याग को तत्पर रहो, भूल स्वीकार करने में साहसी बनो, औदयिक भाव से भिन्न पारिणामिक प्रभु देखने को पुरुषार्थी बनो, स्वाध्याय में अतृप्त रहो एवं स्वानुभव से तृप्त रहो।

अमूल्य निधान की रुचि जगाने वाले पूज्यश्री की सेवा करने में मैं सदा रंक रहा एवं आपश्री के योग्य वचनों का दारिद्र्य भी मुझे आज क्षोभित कर रहा है। अन्त में आपश्री स्वस्थ स्वानन्द में रहते हुए हमारे लिए दर्शन मूर्ति बने रहे यही शुभेच्छा है।

शुभकामना-सन्देश

— मनोजकुमार जैन 'निर्लिप्त'
अलीगढ़

'मङ्गलायतन टाइम्स' का 'पण्डित कैलाशचन्द जैन विशेषांक' प्रकाशित हो रहा है, यह जानकर अति प्रसन्नता है।

आध्यात्मिक चिन्तन के धनी, 'डण्डावाले पण्डितजी' के नाम से प्रसिद्ध पण्डित श्री कैलाशचन्दजी जैन एक ऐसे व्यक्तित्व हैं; जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन वीतराग भगवान की वाणी को समझने-समझाने में लगा दिया। सिद्धान्तों के यथासम्भव अनुपालन एवं प्रतिपादन में दृढ़ रहनेवाले, स्पष्टवादी, साधर्मी वात्सल्य के धनी, थोथे क्रियाकाण्डों एवं वितंडावादों से निर्लिप्त, निर्लेप, निष्प्रही ऐसे जिनवाणी-सेवक, जिनभक्त, सम्यक्धर्म के विचारक, परिचालक, प्रचारक पण्डितजी की विशेषताओं को उद्घाटित करनेवाला 'मङ्गलायतन टाइम्स' का यह विशेषाङ्क प्रत्येक जिनभक्त के लिए प्रेरणादायी, मंगलदायी होगा तथा जन-जन को सन्मार्गी बनने-बनाने में सहकारी होगा, ऐसा पूर्ण विश्वास है।

धन्यवाद,

प्रेरक वाणी के धनी.....

— ब्रह्मचारी कल्पना जैन, सागर
ए-4, बापू नगर, जयपुर-15

विचार-धारा को नया मोड़ देनेवाला शुभ अवसर। सागर शहर में पहली बार (लगभग सन् 1974) डण्डेवाले पण्डितजी के नाम से प्रसिद्ध समादरणीय पण्डित श्री कैलाशचन्द्रजी बुलन्दशहर ने अपनी बुलन्द आवाज में स्वलिखित जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला का साप्ताहिक शिक्षण-शिविर प्रारम्भ किया। उसमें स्व-पर भेदविज्ञान को समझाते हुए छहढाला की दूसरी ढाल के प्रस्तुत पद्य -

''चेतन को है उपयोगरूप, बिनमूरति चिन्मूरति अनूप॥२, उत्तरार्ध॥
पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल, इनतैं न्यारी है जीव चाल॥३, पूर्वार्ध॥''

को स्पष्ट करते हुए बताया कि - (1) मैं ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीवतत्त्व हूँ; (2) मेरा कार्य ज्ञाता-दृष्टा है; (3) आँख, नाक, कानमय औदारिक आदि शरीरोंरूप मेरी मूर्ति नहीं है; (4) चैतन्य, अरूपी, असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है; (5) सर्वज्ञस्वभावी ज्ञानपदार्थ होने से मैं आत्मा ही अनुपम हूँ; (6) मुझ निज आत्मा के सिवाय अनन्त जीव, अनन्तानन्त पुद्गल, धर्म-अधर्म, आकाश एक-एक और लोकप्रमाण असंख्यात कालद्रव्यों से मुझ जीवतत्त्व का स्वरूप पृथक् है; क्योंकि मेरा द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव पृथक् है और इन सबका द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव पृथक् है।

मैंने इसके पूर्व पाठशाला में 'छहढाला' की परीक्षा शत-प्रतिशत अंकों से उत्तीर्ण कर पुरस्कार प्राप्त कर लिया था। मुझे वह सर्वांग भली-भाँति कण्ठस्थ थी, परन्तु इतनी-सी पंक्ति का इतना अर्थ मेरी समझ से बाहर था।

प्रस्तुत विश्लेषण ने मेरे शिक्षण, अध्ययन, स्वाध्याय को एक नयी दिशा दी। इसके बाद मैंने आदरणीय पण्डितजी साहब द्वारा लिखित सातों भागों का गहराई से स्वाध्याय किया। आदरणीय पण्डितजी साहब का पदार्पण भी पुनः पुनः सागर में होता रहा; जिससे विविध विषय स्पष्ट हुए।

इस तात्त्विकधारा के अविरल प्रवाह में उनके योगदान से लाभान्वित हो, इस अवसर में अव्याबाध सुख-शान्तिमय उनके समुज्ज्वल जीवन की मंगल कामना करती हूँ।

आदर्श गुरुवर पण्डित श्री कैलाशचन्द्रजी, बुलन्दशहर

— पण्डित कमलचन्द जैन
पिड़ावा (झालावाड़)

वर्तमान काल में पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के द्वारा हुई आध्यात्मिक क्रान्ति, जिसके द्वारा यथार्थ तत्त्व को उद्घाटित किया गया है, उसके प्रचार-प्रसार में पण्डित श्री कैलाशचन्द्रजी बुलन्दशहरवालों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। आपश्री पूज्य गुरुदेवश्री के अनन्य भक्त तो थे ही परन्तु सम्यक तत्त्व को आत्मसात करके पूज्य गुरुदेवश्री के सामने ही सोनगढ़ में रहकर निरन्तर कक्षाएँ लेते थे, जिसका मुझे भी लाभ मिला है। आपश्री कक्षाएँ बड़े सरल एवं प्रभावोत्पादक ढंग से संचालित करते थे। आपने अपने प्रवचनों एवं पूज्य गुरुदेवश्री द्वारा बताये हुए जिनधर्म के सारभूत सिद्धान्तों का 'जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला' के नाम से सात पुस्तकों का प्रकाशन करवाकर, तत्त्व को जन-जन तक पहुँचाया; साथ ही स्वयं ने भारत देश के कोने-कोने में जाकर वहाँ एक-दो माह रहकर तत्त्वज्ञान कराया। आपश्री ने एक कुशल शिक्षक की भाँति आवश्यक सामग्री — पुस्तक, श्याम पट्ट, चाक, डस्टर; सहायक सामग्री- आदर्श मॉडल चार्ट, नक्शे आदि के माध्यम से सूक्ष्म तत्त्वज्ञान को सरलता से जन-जन के हृदय में बिठाया है।

ज्ञान प्राप्त करना अलग बात है और प्राप्त ज्ञान को इस प्रकार अभिव्यक्त करना कि वह सामनेवाले को आसानी से समझ में आवे।' अलग बात है। वास्तव में आपश्री ने गणधर जैसा कार्य किया है।

आज भी आप 99 वर्ष की अवस्था में होकर भी सम्यक्तत्त्व के प्रति सदैव सजग रहते हैं। यही आपश्री के लिये श्रेयस्कर है। मैंने स्वयं ने हमारे नगर पिड़ावा में जब भी आपश्री पधारते थे, आपश्री का प्रिय शिष्य होकर ज्ञानाभ्यास किया है। आप द्वारा लिखवाये गये नोट्स, जिसमें प्रश्नोत्तरों में अपनी प्रयोजनभूत बात समझी, आज भी उन नोटस को देखता हूँ तो सहज ही आपकी याद के साथ उपकृत हुए बिना नहीं रहता। तत्त्व के प्रति आपकी श्रद्धा इतनी प्रबल थी कि अपने पुत्र श्री पवनकुमारजी को स्पष्ट कहा कि जब तुम इस मार्ग पर नहीं आओगे, तब तक तुम मेरे सच्चे उत्तराधिकारी नहीं हो सकते। प्रेरणास्वरूप श्री पवनजी इस मार्ग पर आये और मङ्गलायतन जैसी सशक्त संस्था का निर्माण हुआ, जो आज देश-विदेश में ख्याति प्राप्त है और व्यवस्थित रूप से देश-विदेश में तत्त्वप्रचार में रत है।

लिखना तो बहुत है और आपके प्रति बहुमान भी बहुत आता है परन्तु इसी भावना के साथ विराम लेता हूँ कि आपश्री दीर्घायु होकर सदैव हमारे मार्गदर्शक एवं आदर्श गुरु के रूप में हृदय में स्थान पाते रहें।

पहले सम्यक्त्व का वरण करो

— पण्डित अनिल जैन शास्त्री 'धवल', भोपाल

जिस प्रकार किसान लक्ष्य की दृढ़तापूर्वक ठण्ड, गर्मी, वर्षा आदि विभिन्न ऋतुओं में अपनी बुद्धि चातुर्य, पराक्रम से बंजर भूमि को उपजाऊ शस्य-श्यामल बना देता है, अधिक क्या कहें वह स्वयं भूमिमय हो जाता है। ठीक उसी प्रकार आदरणीय पण्डितजी साहब ने तीक्ष्ण प्रज्ञा के बल से वाणी के घोर पराक्रम से डण्डे, अर्थात् तत्त्वज्ञान की प्रचण्ड हुंकार से सम्यक्त्व की मुख्यतापूर्वक वस्तुस्वरूप को ऊर्ध्व रखते हुए, अपनी ऊर्जारूपी उर्वरा से हम सभी के चित्त अभिसिंचित किया है, चैतन्यामृत को पीने योग्य बनाया है।

बात उन दिनों की है, जब आध्यात्मिक सत्पुरुष पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के सातिशय प्रभावनायोग में निर्मित तीर्थधाम मङ्गलायतन के सफल स्वप्नदृष्टा आदरणीय पण्डित साहब के मंगलमय सानिध्य में प्रवर नेतृत्वकार आदरणीय पवनजी भाईसाहब के साथ हम सभी तीर्थधाम मङ्गलायतन के पञ्च कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव की प्रथम वर्षगाँठ मना रहे थे, वहाँ दोपहरकालीन सत्र के अन्तर्गत मङ्गलायन की श्वांसों में व्याप्त आदरणीय पण्डितजी साहब के द्वारा मूलभूत तत्त्वज्ञान की वस्तु स्वरूप से लबालब भरी हुई कुशल कक्षाओं संयोजन प्रतिदिन होता था, मैं भी उन कक्षाओं में प्रति भाजन बना हुआ था, कक्षा कार्य के पश्चात मैंने पण्डितजी साहब से शुभ आशीर्वाद लिया। तब मैंने उनसे कहा कि मैं भी आपके समान निर्वांछक तथा वात्सल्यभाव से दिग-दिगान्त में तत्त्वज्ञान खूब प्रचार-प्रसार करना चाहता हूँ। तब उन्होंने अपने भावमयी गहरे नेत्रों से मुझे सिंचित किया और मुझसे अत्यन्त प्रीतिपूर्वक कहा - दिगम्बर धर्म ही सत्य है। स्व में वस, पर से खस, ये है अध्यात्म का कस, इतना करो तो वस। पूज्य गुरुदेवश्री ने जो कहा वो परम सत्य है, तुम धर्म का खूब प्रचार-प्रसार करो, परन्तु पहले सम्यक्त्व वरण करो।

ख्याति लाभ की चाह से दूर

— पण्डित किशनचन्द जैन
अलवर (राजस्थान)

यह जानकर अति प्रसन्नता हुई है कि मङ्गलायतन, आदरणीय पण्डितश्री कैलाशचन्द्रजी के सम्बन्ध में एक विशेषाङ्क निकालने जा रहा है। उनके बारे में विशेषाङ्क अवश्य निकलना चाहिए।

मैं जब-जब भी सोनगढ़ शिविरों में गया, वहाँ पण्डितजी, कक्षा के अलावा पढ़ाये हुए विषय का रिवीजन कराते थे। वे रात्रि को चार बजे ही सबको खड़ा कर देते थे, अर्थात् सोते हुए को जगाकर शिविर में चले हुए विषय को घुटवाते थे।

मोक्षमार्गप्रकाशक पर उनका पूर्ण अधिकार था। मोक्षमार्गप्रकाशक के पन्ने नम्बर तक उनको मौखिक याद थे। आगे-पीछे का सन्दर्भ मिलाते हुए विषयों को समझाते थे।

उनको स्वामीजी के ऊपर अटूट श्रद्धा थी। स्वामीजी के तत्त्वप्रचार में वे तन-मन-धन से पूरी तरह से लगे हुए थे।

शिविरों के अलावा भारतवर्ष के जितने भी मुमुक्षु मण्डल थे, उनमें अनेकों बार जा-जाकर प्रचार करते थे। वे किराया-भाड़ा तक भी नहीं लेते थे; न ही भेंट-पूजा-शाल वगैरह स्वीकार करते थे, न ही अपनी प्रशंसा करवाते थे। उन्होंने जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला के सात भाग भी छपवाये थे, जिनमें स्वामीजी के सभी विषय, जो शिक्षण-शिविर में चलते थे, उनको छपाकर प्रचार-प्रसार में योगदान दिया।

वे जो भी कहते थे, डंके की चोट पर कहते थे। क्रोध तो उनको किंचित भी नहीं आता था। देहरादून तथा बिजौलियाँ मुमुक्षु मण्डल की स्थापना तो उन्होंने ही की थी।

वे ख्याति-पूजा के चक्कर में किंचित् भी नहीं थे। मैं पहले से ही विचार करता था कि ऐसे कर्मठ, निस्वार्थी जीव के बारे में विशेषाङ्क निकलना चाहिए। मेरे ऊपर और अलवर मुमुक्षु मण्डल के ऊपर उनका बहुत विशेष उपकार है। ऐसे कर्मठ व्यक्ति के लिए शत-शत वन्दन करता हूँ।

अपना सारा जीवन जगह-जगह घूमकर तत्त्व प्रचार-प्रसार में लगा दिया - ऐसे व्यक्ति का तो विशेषाङ्क अवश्य ही निकलना चाहिए।

जैन अध्यात्म के समर्पित शिक्षक

— डॉ. मानमल जैन
कोटा, राजस्थान

जैनधर्म के बीसवीं सदी के इतिहास में सर्वाधिक चर्चित व्यक्तित्व पूज्यश्री कानजीस्वामी का रहा। जिस प्रकार महात्मा गाँधी अपने व्यक्तित्व व कर्तृत्व के कारण देश के गाँव-गाँव व शहर-शहर तक पहुँचे; उसी प्रकार श्री कानजीस्वामी की जैनदर्शन व धर्म की व्याख्या, उनके जैन सिद्धान्तों के स्पष्टीकरण और उनके कर्तृत्व ने एक आध्यात्मिक क्रान्ति के रूप में देश के कोने-कोने तक और विदेशों में पहुँच कर अध्यात्म रुचिवाले व्यक्तियों को प्रभावित किया। सोनगढ़ से प्रसारित हुई इस आध्यात्मिक क्रान्ति को प्रसारित करने में अनेक व्यक्तियों ने अपना जीवन समर्पित किया। पण्डित कैलाशचन्दजी बुलन्दशहर, क्रान्ति वाहकों में अग्रणीय रहे।

व्यवसाय से व्यापारी होकर भी पण्डितजी समर्पित, सफल, कुशल शिक्षक के रूप में उभरे। गाँव-गाँव में जाकर लम्बे समय तक वहाँ रुककर जैनदर्शन व अध्यात्म से अनजान लोगों में अध्यात्म की पक्की नींव डाली। अपने शिविरों द्वारा हजारों लोगों को स्वाध्याय में लगाया। उन्होंने अध्यापन की एक विशेष शैली विकसित की, जिसका आधार 'कम पढ़ाओ, पर पक्का पढ़ाओ' रहा। गूढ़ विषय भी साधारण लोगों को ग्राह्य हो जावे, इस हेतु प्रश्नोत्तर शैली में स्वयं ने पाठ्यपुस्तकें लिखी व प्रकाशित करवाकर देश के कोने-कोने में पहुँचाई।

सिद्धहस्त शिक्षक के साथ ही वे अपने धुन के धुनी रहे। बिना किसी अपेक्षा के 'एकला चलो' की नीति का अनुसरण कर गाँव-गाँव तक धर्म पढ़ाने पहुँचे। निस्पृहता ऐसी कि 'अपने कारण से समाज पर किंचित भी कोई भार न पड़े' - इस हेतु सदा सावधान रहते। केवल एक संकल्प की यह जैन तत्त्वज्ञान हर गाँव, घर व व्यक्ति तक पहुँचे।

ऐसे निस्पृह शिक्षक के प्रयासों ने देश के विभिन्न भागों में अध्यात्म के अध्ययन अध्यापन केन्द्रों की नींव डाली, जो विकसित होते हुए मङ्गलायतन जैसे वटवृक्ष के रूप में फलित हुई।

शतायु होने के अवसर पर उन्हें शत-सहस्र श्रद्धा सुमन समर्पित हैं।

धर्म के प्रेरणा स्त्रोत पण्डित कैलाशचन्द्रजी

— पण्डित अशोककुमार लुहाड़िया
निदेशक, तीर्थधाम मङ्गलायतन

आदरणीय पण्डित श्री कैलाशचन्द्रजी का सर्वप्रथम सानिध्य 1979 में टोडरमल स्मारक, जयपुर में मुझे प्राप्त हुआ, मैं उस समय टोडरमल महाविद्यालय का प्रथम वर्ष छात्र था। मुझे उस समय पण्डितजी की देख-रेख का कार्य सौंपा गया, मैंने अपना अहो भाग्य समझा, उससे मुझे पण्डितजी की सुबह से शाम तक की सम्पूर्ण गतिविधि जानने को मिली। पण्डितजी जैसा सहज, सरल, स्वाभीमानी, दूसरे के सुख-दु:ख को जाननेवाला, अन्दर-बाहर खुली डायरी, निश्चल व्यक्तित्व उनमें देखा। पण्डितजी प्रात: 5 बजे घूमने जाते, मैं उनके साथ घूमने जाता। हम टोडरमल स्मारक के आस-पास मन्दिर के दर्शन करते, पण्डितजी लोगों को देखकर करुणा से कहते - देखो! इनको कुछ भी पता नहीं है, ये इसी क्रिया-काण्ड को धर्म मानकर बैठे हैं।

पण्डितजी कहते थे की पूजा बोलना, यह भाषावर्गणा का कार्य है तथा सामग्री एक थाली की दूसरी थाली में चढ़ाना, यह आहारवर्गणा का कार्य है। यह दोनों कार्य पुद्गल के खाते में जाता है, मैं उसको जाननेवाला हूँ, क्योंकि मैं जीव हूँ, मेरा कार्य जानना-देखना है। उनकी बातें सुनकर अटपटी लगती थीं।

क्योंकि मैंने भी टोडरमल स्मारक में उसी वर्ष प्रवेश लिया था। अत: धर्म के बारे में विशेष जानकारी नहीं थी लेकिन पण्डितजी के तर्क, उदाहरण, समझाने की शैली जनसामान्य जैसी रही, अत: समस्या का समाधान सहज हो जाता; वे हमेशा कहते हैं कि सबसे पहले लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका का अध्ययन करो, उन्होंने मुझे टोडरमल स्मारक, जयपुर में लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका अकेले को पढ़ाया, मैंने उनके जीवन में कभी प्रमाद नहीं देखा, यह नहीं कहते सुना, तुम अकेले हो - मैं कैसे पढ़ाऊँ। वह पढ़ाने के लिए हमेशा तैयार रहते। सन् 2003 में तीर्थधाम मङ्गलायतन के पञ्च कल्याणक के लिए आदरणीय पण्डितजी तथा भाईसाहब पवनजी और मैं मध्यप्रदेश टूर के लिये गये, रात्रि के लगभग 12 बजे हम सिवनी पहुँचे, वहाँ कोई प्रोग्राम चल रहा था, पण्डितजी कहने लगे - क्या मुझे अभी क्लास लेना है ? तत्त्वाभ्यास के लिए पण्डितजी हमेशा तैयार रहते। पण्डितजी की हमेशा एक ही भावना रही कि समाज इस तत्त्वज्ञान को समझे।

वे कहते है कि पूज्य गुरुदेव ने पञ्चम काल को चौथा काल बना दिया है। वास्तव में

मुझे गुरुदेव और सोनगढ़ के प्रति बहुमान प्रगट कराया तो वे पण्डित कैलाशचन्द्रजी हैं।

तीर्थधाम मङ्गलायतन की नींव रखी जा रही थी। भाई साहब पवनजी मङ्गलायतन की देखरेख के लिए व्यक्ति की तलाश कर रहे थे, भाई साहब ने कहा कि पण्डितजी ने तुम्हारे लिए कहा, यह सुनकर मुझे बहुत खुशी हुयी। मैंने घर पर पिताजी से चर्चा की उन्होंने तत्काल हाँ कहा। मैंने उनसे कहा – वहाँ कुछ भी व्यवस्था नहीं है; तो पिताजी ने कहा पण्डितजी है, बस तुझे और क्या चाहिए। मङ्गलायतन में पण्डितजी की प्रेरणा एवं दर्शन हमेशा मिलता रहा है।

पण्डितजी का जीवन एक चलती-फिरती प्रयोगशाला है, जिससे हम अपना जीवन सम्भाल सकते हैं। मैंने देखा है कि जिनवाणी के प्रति पण्डितजी का कितना समर्पण है, गाँव-गाँव जाकर अपने खर्च से तत्त्वप्रचार किया। तत्त्वज्ञान जन-जन तक पहुँचे इसके लिये कम से कम कीमत में पुस्तकें समाज तक पहुँचायीं। कोई जिनवाणी के बारे में सुनायें, उसके लिये स्वयं हजारों रुपये का पुरुस्कार दिया। तत्त्वज्ञान की पाठशाला के लिए हमेशा समाज को प्रेरणा देते रहें। पाठशाला के स्थान हों अगर उसमें आर्थिक समस्या आयी तो पण्डितजी ने स्वयं अपना योगदान दिया। मुझे आज भी याद है कि बिजौलियाँ मुमुक्षु मण्डल बन रहा था, मेरे पिताजी श्री चांदमलजी लुहाड़िया पण्डितजी की सेवा में हमेशा लगे रहे। पण्डितजी ने कहा की स्वाध्याय भवन में तुम्हें इतना रुपया देना है। पिताजी की आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं थी, पर लेकिन पण्डितजी ने स्वयं घर पर आकर उनको रुपया दिया और कहा स्वाध्याय भवन को तुम अपने नाम से रुपया दे दो। ऐसा निरभिमानी व्यक्ति मैंने अपने जीवन में नहीं देखा। पण्डितजी ने मुमुक्षुओं को अपने बेटे से अधिक माना, बेटे के सुख-दु:ख का विशेष ध्यान नहीं दिया लेकिन मुमुक्षु को जरा भी तकलीफ होती, आधी-रात को भी तैयार रहते। मुमुक्षु एक रहे, यही भावना उनकी हमेशा रही। किसी की कोई गलती हो तो तत्काल उसे अपना भाई समझकर दूर करने का प्रयत्न करते। पण्डितजी निर्भीक, मेहनती, साहसी, सेवाभावी, अनुशासन, शास्त्रपाठी आदिगुण उनमें सहज झलकते हैं।

मेरी भावना रही कि पण्डितजी के सात भाग जन-जन की वस्तु बने। आज की पद्धति में पुस्तकें छपे, इसके लिए भाई देवेन्द्र जैन से कहा, उन्होंने पण्डितजी की शैली-जैसी है, वैसा रखकर नयारूप देकर देहरादून मण्डल द्वारा यह कार्य कराया। इसके लिए मैं बहुत-बहुत आभारी हूँ। वास्तव में पण्डितजी ने जो कार्य किया उसका कोई सानी नहीं है। हम सब उनके बताये मार्ग पर चलें बस — अभी भी उनकी आवाज गुँजाएमान होती 'स्व में बस पर से खस, आयेगा आत्मा में अतीन्द्रिय रस, इतना कर लो बस'!

आध्यात्मिक क्रान्तिकारी-पण्डित कैलाशचन्द्रजी

— **राजकुमार शास्त्री,** ध्रुवधाम, बांसवाड़ा

भारतदेश शताब्दियों से अंग्रेजों की दासता में जकड़ा हुआ था, अनेक देशभक्तों ने स्वतन्त्रता हेतु प्रयास किये, परन्तु सफलता नहीं मिली, तभी देश के पश्चिम में एक महापुरुष का जन्म हुआ, जिसने क्रान्ति का अग्रदूत बनकर बिना रक्तपात के हजारों क्रान्तिकारियों को एकत्र कर देश को स्वतन्त्रता दिलायी।

इसी प्रकार शताब्दियों से बाह्याडम्बर एवं क्रियाकाण्ड की दासता में कैद वस्तुस्वातन्त्र्यरूप यथार्थ धर्म के स्वरूप के उद्घाटनकर्ता को जन्म देने का सौभाग्य भी पश्चिम को ही प्राप्त हुआ, जहाँ श्री कानजीस्वामी के रूप में आध्यात्मिक क्रान्ति के अग्रदूत का जन्म हुआ। जिन्होंने वैराग्य व भक्तिरस से पूर्ण अपनी ओजस्वी वाणी से सारे देश को अध्यात्ममय कर दिया। आपने दिगम्बरधर्म के सिद्धान्तों को सरलतापूर्वक तर्क व युक्ति से इस तरह प्रस्तुत किया कि वर्षों का अभ्यासी समाज भी उनके द्वारा उद्घाटित सम्यग्दर्शन का विषय, क्रमबद्धपर्याय, निश्चय-व्यवहार, पर्यायमात्र की स्वतन्त्रता, व्यवहार धर्म की हेयता आदि विषयों के बारे में सोचने को मजबूर ही नहीं हुआ, अपितु इन सिद्धान्तों के यथार्थबोध से कृतकृत्य हुआ।

अध्यात्म युगस्रष्टा पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी की इस आध्यात्मिक क्रान्ति को देश के गाँव-गाँव व नगर-नगर में फैलाने का जिन विद्वानों, कार्यकर्ताओं का योगदान है, उनमें पण्डित कैलाशचन्द्रजी बुलन्दशहरवालों का नाम अग्रगण्य है।

पण्डित कैलाशचन्द्रजी अपने गुरु के प्रति समर्पित उस व्यक्तित्व का नाम है, जिसने अपने गुरु द्वारा प्ररूपित तत्त्वज्ञान को न केवल आत्मसात् किया, बल्कि उस भवभयहारी तत्त्वज्ञान को अपनी बुलन्द आवाज में पारिवारिक उदाहरणों के द्वारा समझाते हुए एक-एक गाँव में महीनों रहकर, घर की सुविधाओं व जिम्मेदारियों को क्रमबद्धपर्याय के भरोसे छोड़कर, लगभग 60 वर्षों तक आबाल वृद्ध तक पहुँचाया।

देश में ऐसे अनेक स्थान व व्यक्ति हैं जो मात्र पण्डितजी के प्रभाव से ही गुरुदेव से जुड़े। आपकी यह विशेषता रही है कि जिन भी विषयों का, विशेषकर छह द्रव्य, छह सामान्यगुण, चार अभाव एवं वस्तु स्वरूप के उद्घाटक व पूर्ण स्वतन्त्रता के उद्घोषक मोक्षमार्गप्रकाशक व समयसार आदि के चयनित अंश जो भी आपने जहाँ भी पढ़ाया, उसे

आपने कण्ठस्थ ही नहीं, अपितु हृदयस्थ करा दिया। इसीलिए देश में सैकड़ों की संख्या में आपके शिष्य हैं, जो किसी विद्वान् से कम नहीं हैं। अत: सत्य ही है कि आध्यात्मिक क्रान्ति प्रणेता श्री कानजीस्वामी के आप क्रान्तिकारी शिष्य हैं।

आपके इस योगदान के साथ-साथ आपके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करने का एक और महत्वपूर्ण कारण है और वह है कि आपने अपने सुयोग्य पुत्र श्री पवनजी को भी पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी द्वारा उद्घाटित तत्त्वज्ञान से न केवल अनुप्राणित किया, बल्कि तन-मन-धन लगाकर उसे प्रचारित करने हेतु प्रेरित भी किया और इसी भावना का फल है विश्व की अद्भुत रचना मङ्गलायतन; जो जिनशासन की महिमा के साथ-साथ उसके प्रेरक, निमित्त को भी स्मरण करने को मजबूर करता है। आदरणीय पण्डितजी शतायु हों, अन्दर-बाहर स्वस्थ रहें। उनका देव-शास्त्र-गुरु एवं गुरुदेव के प्रति का समर्पण हमें नित्य प्रेरक बनें - इसी के साथ मैं सादर विनयांजलि समर्पित करता हूँ।

हमारी अपार श्रद्धा है

— पूरनचंद्र जैन, सोलंकी कालोनी, सनावद।

मुझे यह जानकर परम प्रसन्नता है कि आप श्री कैलाशचन्द्र जैन विशेषांक प्रकाशित कर रहे हैं। श्री जैन साहब प्रशिक्षण शिविरों आदि में बराबर हाथ बँटाते थे, स्वामीजी के प्रति उनके हृदय में अपार श्रद्धा है, उन्होंने जीवन भर प्रचार-प्रसार में भाग लेकर शिविरों में उपस्थिति दर्ज कराई। तत्त्व उद्बोधन देकर धर्म प्रचार किया। अपनी 99 वर्ष की अवस्था में भी सेवा की भावना से कार्यकर्ताओं का उत्साह बढ़ाते हैं। हमारे हृदय में उनके प्रति अपार श्रद्धा है। मङ्गलायतन उनकी सेवा / श्रद्धा का सफल उदाहरण है। मैं उनके शतायु जीवन की कामना करता हूँ।

तत्त्वज्ञानयोगी

— पण्डित संजय जैन शास्त्री
तीर्थधाम मङ्गलायतन

यूँ तो दुनिया में हजारों जीव जन्म लेते हैं, और अमूल्य मनुष्यपर्याय को सही दिशाबोध के बिना, जीवन नष्टकर चतुर्गति में श्रमण करते हैं। हमारे पूज्य पण्डित कैलाशचन्द्रजी का व्यक्तित्व ऐसा है, जिन्होंने पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के प्रताप से न केवल दिशाबोध प्राप्त किया बल्कि आज शतायुष्य होने पर भी दृढ़ता से उसी मार्ग के पथानुगामी हैं।

सुख-दु:ख, हानि-लाभ, यश-अपयश में समदृष्टा, तत्त्वज्ञान की दृढ़ता को भी नहीं छोड़ा। आत्मकेन्द्रित सिद्धहस्त योगी की भाँति पण्डितजी ने सदा तत्त्वज्ञान का जीवन जीया है। निर्धनता के समय भी कभी दीनता नहीं आयी, किसी से फूटी कौड़ी की भी वांछा नहीं की, चक्रवर्ती सम्राट की भाँति लुटाते चले गये ज्ञानवैभव को। ऐसा कभी न देखा, न सुना कि किसी को प्रसन्न करने के लिये पण्डितजी ने कोई प्रयत्न अथवा एक शब्द भी बोला हो, जब बोला तब आत्मकल्याण के वचन ही बोले।

कठोरता में करुणा पण्डितजी का सहज ही स्वभाव है। लौकिक विवाह, जन्मादि का कभी आपने पोषण नहीं किया, लौकिक कार्य करके आशीर्वाद माँगनेवाले को हतोत्साहित करके हमेशा तत्त्वज्ञान की ही प्रेरणा दी। पक्षपात तो दूर, उसकी गन्ध भी पण्डितजी साहब में नहीं है। किसी की झूठी प्रशंसा तो स्वप्न में भी नहीं की और तो और अपने स्व पुत्र का भी कभी आपने गलत पक्ष नहीं लिया।

आज तब दैहिक स्थिति देखें तो, इन्द्रियाँ अत्यन्त शिथिल हैं पर ज्ञान, जवान है, सोते-सोते भी तत्त्वज्ञान की लोरी सुनाते रहते हैं। ज्ञानचेतना इतनी सजग है कि रोगी शरीर होने पर भी परिणामों शिथिलता नहीं, अपने तारणहार पूज्य गुरुदेवश्री के उपकारों का वर्णन करना कभी नहीं भूलते।

इन सब लक्षणों से ज्ञात होता है कि हमारे पण्डितजी साहब आत्मानुभवी एक तत्त्वज्ञानी योगी हैं। आपकी एक-एक श्वांस जिनशासन प्रभावना की ध्वजा को फहराने के लिए ही चल रही है। आपश्री मुमुक्षुओं के भाग्य से शतायुष्य तो है ही, आप चिरायु हो, ऐसी हमारी मङ्गल भावना है। आपका अस्तित्व पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी की वीतरागरस झरती वाणी प्रभावना का महायोग है। हम आपके चरणों में अनन्तों नमस्कार करते हुए भावना भाते हैं कि आपके चरणों में तत्त्वज्ञान की कला सीखकर भव-भ्रमण का अन्त हो, आत्मस्थ होकर शाश्वत् सिद्धशिला पर वास हो।

अलौकिक व्यक्तित्व के धनी — आदरणीय पण्डितजी

– **पण्डित सुधीर शास्त्री**
तीर्थधाम मङ्गलायतन

आदरणीय पण्डितजी उन गुरु के शिष्य हैं, जिन्होंने सोनगढ़ में 45 वर्षों तक सिंह गर्जनारूप वाणी को प्रसारित किया है।

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी को आज जैन समाज में कौन नहीं जानता ? आज सर्वत्र दिगम्बरत्व का वैभव पूज्य गुरुदेवश्री की देन हैं। पण्डितजी ने गुरुदेवश्री की वाणी को हृदयगम करके सम्पूर्ण जैनसमाज में उस वाणी परोसा है, अर्थात् गणधर जैसा कार्य किया है।

एक ओर जहाँ समाज में क्रिया काण्ड जोरों पर था। वही समाज का एक पैसा न लेकर, ज्ञान दानकर समाज पर उपकार किया है। अगर एक पोस्टकार्ड मँगाते तो पैसा स्वयं देते।

मेरा परिचय तीर्थधाम मङ्गलायतन की प्रतिष्ठा से पहले हुआ। मैं दिल्ली पब्लिक स्कूल के इन्टरव्यू हेतु आया था। तब पण्डितजी से चर्चा हुई थी, उसके पहले उनका नाम एक बार देहरादून में सुना था, उस समय पण्डितजी वहाँ पर नहीं थे।

तीर्थधाम मङ्गलायतन की प्रतिष्ठा के बाद श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन में पढ़नेवालेबच्चों की कक्षा लेने प्रतिदिन मङ्गलायतन आया करते थे। उन कक्षाओं में हम सभी लोग बैठते थे। पण्डितजी की यही भावना रहती थी कि जिनवाणी सभी के कण्ठ में बसे। इस भावना से पुरुस्कार भी दिया करते थे। सभी भगवान बनें, निज कार्य करें – इस प्रकार प्रेरणा दिया करते थे।

वे कहा करते थे पूज्य गुरुदेवश्री ने इस पंचम काल को चौथा काल बनानेवाले एवं भरतक्षेत्र को विदेहक्षेत्र बनानेवाले हैं। पण्डितजी, स्वाध्याय / कक्षाओं में ग्रन्थों के पेज / लाइन मौखिक बताया करते हैं। वे कहा करते हैं कि सम्पूर्ण दु:खों का अभाव होकर सम्पूर्ण सुख की प्राप्ति का उपाय मोक्षमार्गप्रकाशक में इस प्रकार बताया गया है।

अनादि निधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी मर्यादासहित परिणमित होती हैं, कोई किसी के आधीन नहीं है; कोई किसी को परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती, पर को परिगमित कराने का भाव मिथ्यादर्शन है।

उनकी पढ़ाने की शैली प्रश्नोत्तररूप में भी उनके जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला के सात भाग प्रसिद्ध हैं।

जब भी मिलते, एकमात्र धर्म की चर्चा करते। 99 वर्ष की उम्र में भी 'निज कार्य करने लायक हैं' इस प्रकार की वाणी ! वास्तव में अलौकिक व्यक्तित्व के धनी हैं पण्डितजी।

शत शत बधाईयां

— झांझरी ब्रह्मचारिणी बहिनें, उज्जैन

दीर्घायु महापुण्य के योग से मिलती है। उस आयु के पलों का प्रयोग आत्म-आराधना एवं जिनधर्म की आराधना में बीते, यह तो महा-महा पुण्योदय का योग है।

अनादि-अनन्त आत्मा की सत्ता की स्वीकृति सादि-अनन्त सुख में पहुँचा देगी।

पण्डितजी का व्यक्तित्व एवं जीवन-साधना अपूर्व अलौकिक है। 'सादा जीवन, उच्च विचार' उक्ति को चरितार्थ कर दिया है। एक द्रव्य दूसरे का कर्ता नहीं; अनादि-अनन्त सब वस्तुएँ स्वतन्त्र परिणमित होती है। वस्तु स्वातन्त्रय का सिद्धान्त, परद्रव्य परभाव का अकर्ता; पर्यायमात्र षट्कारक से परिणमित होती है; द्रव्य-गुण की भी अपेक्षा नहीं - ऐसे-ऐसे अनेक जिनधर्म के सिद्धान्तों को जीवन में अपनाया एवं भव्य जीवों को समझाया। अनेक जीवों के कल्याण में निमित्त बने।

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के तत्त्वोपदेश से जीवन में परिवर्तन आया। उनके अनुपम उपकारी को व तत्त्वोपदेश को जन-जन तक पहुँचाया।

आत्मार्थी जीव आपके इन उपकारों से ऋणी रहेगा।

पूज्य कानजीस्वामी के अनन्य भक्त, जिनधर्म के उपासक, जिनधर्म प्रभावना के प्रेरक, अनेक गुणों से युक्त पण्डितजी पूर्णदशा को प्राप्त हो, अल्प काल में मुक्ति वरण करें - ऐसा आशीर्वाद चाहते हुए आप दीर्घायु हों - ऐसी मंगल कामना करे साथ शत-शत वन्दन।

जीवन उद्धारक : पण्डितजी

— पदमचन्द जैन सर्राफ, आगरा

आपने श्री मङ्गलायतन टाइम्स पत्रिका में पण्डितजी पवित्र जीवन के बारे में मुमुक्षुजनों के मनोभाव जानने के लिए सर्वोत्तम कार्य किया है।

जब से पण्डितजी, परम पूज्य गुरुदेवश्री के समीप में गये, उनकी अध्यात्मवाणी को मनोपयोग से सुना वे उनकी अच्छी होनहार एवं निकट भव्यता के लक्षण थे।

धर्मात्मा जीव स्वयं तो तिरते ही हैं, भव्य जीवों को पार उतारने की कला में भवसमुद्र से पार उतारने में नाविक के समान हैं।

संसारी जीव, मोह और अज्ञान के कारण अनादि काल से जन्म-मरण के चक्कर में उलझकर दु:खों से त्रस्त है। काश, इसे अपने पूर्व जन्मों की बात याद आ जाय तो बड़े-बड़े के कलेजे फट जाय! नरक-निगोद के एक समय के दु:ख करोड़ों जीभ से कहे जायँ तो भी उनका अन्त नहीं आ सके - ऐसे-ऐसे दु:ख करोड़ों वर्षों तक सहन किये हैं।

ऐसे भयंकर दु:खों से बचने का उपाय पण्डितजी ने जिनवाणी के आधार से पूज्य गुरुदेवश्री के मुखारबिन्दु से श्रवण कर, पूर्ण दृढ़तापूर्वक जीवन में उतार कर, हम जैसे पामर पुरुषों पर अनन्त उपकार किया है।

ऐसे इस पंचम काल में जहाँ जीव, अधिकतर मान-कषायरूप में निमग्न रहते हैं, ऐसे कलिकाल में पण्डितजी का जन्म आश्चर्यकारी है।

सारी दुनिया जगत के कार्यों में व्यापारादि, लोभ-कषाय से त्रस्त है, पण्डितजी के द्वारा जिनागम के मूल सिद्धान्तों का हिन्दी में सरल भाषा के रूप में आत्म प्राप्ति करने के लिए सुगमरूप से हृदयंगम कराना, ये उनकी अद्वितीय गजब की शैली है।

सिद्धान्तों के समझ में आने से हम बने बनाये भगवान है, भगवान बनना नहीं है, यह बात समझ में आने से बहुत सी करनेरूप आकुलाएँ स्वत: मिट जाती है; कर्तापने का भाव विलय हो जाता है। आनन्द में जीवन जीने की शुरुआत हो जाती है।

- ऐसे काल में हमारा जन्म भी उनके उदय के समय हुआ, हम लोग भी बहुत भाग्यशाली हैं - ऐसी प्रतीति होने लगी है। हमारी भी काललब्धि पक गयी है, निकट भविष्य में मुक्ति मिलनी ही मिलनी है, इसमें सन्देह नहीं समझना चाहिए।

मङ्गल समर्पण

अनन्त दु:खों से बचाने का भाव पण्डितजी ने अपने दृढ़ता के बल से और तो क्या बतायें, डण्डे के बल से भी समझाने का पूरा-पूरा पुरुषार्थ किया है।

मेरा परिवार भी पूर्व में बहुत भाग्यशाली रहा है। सन् 1974 में किसी धन्य पल में निरन्तर चार माह तक पण्डितजी के हमारे यहाँ ठहरने से पूरा-पूरा सिद्धान्तों को समझकर जीवन में उतारने का सुअवसर प्राप्त हुआ था। पण्डितजी की प्रेरणा से 'जैन सिद्धान्त प्रवेशिका' के सातों भाग काफी संख्या में प्रकाशित हुए और उनके स्वाध्याय से बहुत से जीवों को बहुत लाभ हुआ था।

उन्होंने अपने पूरे जीवन में जो अध्यात्म की गंगा बहायी है, तदनुसार उसी जाति का अद्वितीय पुण्य भी फला है। उनके सुयोग्य पुत्र श्री पवनजी ने श्री मङ्गलायतन की रचना रचकर देवों पुनीत अद्‌भुत कार्य किया है। श्री मङ्गलायतन की शोभा का वर्णन वचनातीत है। लगता नहीं किसी एक व्यक्ति द्वारा हुआ हो, कल्पना से परे है। ये सब पण्डितजी के अन्दर के भावों का ही कार्य हुआ है। पूज्य गुरुदेवश्री की अनन्त-अनन्त महिमा के भाव हमने स्वयं पण्डितजी में देखे हैं।

मुमुक्षु समाज में मेरे जीवन में दो व्यक्तियों की पूर्ण समर्पणता से बहुत-बहुत प्रभावित भी हूँ। एक तो सेठ पूनमचन्दजी गादिका, दूसरे पण्डित श्री कैलाशचन्द्रजी के अन्दर भावों को दर्शानवाले श्री पवनजी। वर्तमान में धर्मप्रभावना के कार्यों में श्री पवनजी का भाव अनुकरणीय है। सही योजनाबद्ध कार्यशैली प्रशंसनीय है। हम तो बस यही भावना भाते हैं कि उनका दृष्टि का जोर इससे भी अनन्त गुना हो।

अध्यात्मदृष्टि से देखा जाय तो जीव, आयु से नहीं, जीवत्वशक्ति से जी रहा है। अनादि-अनन्त आत्मा के धारक पण्डित कैलाशचन्द्रजी सदेह हमारे बीच विराज रहे हैं, उनसे मार्गदर्शन मिलता रहे, हम धर्ममार्ग से च्युत न हों। आपका संयोग बना रहे, यही पवित्र भावना है।

सारा श्रेय पण्डितजी को

— **दिनेशभाई शहा,** मुम्बई

जब तक मूल जैन सिद्धान्तों का यथार्थ ज्ञान नहीं होता, तब तक बड़े-बड़े ग्रन्थों का यथार्थ मर्म भी समझना मुश्किल हो जाता है। मुझे याद है कि मैं सन् 1980 से हर पर्यूषण पर्व में प्रवचनार्थ गाँव-गाँव जा रहा हूँ और हर जगह दिन में तीन बार मैंने जैन सिद्धान्तों को ही पढ़ाया है। जैन सिद्धान्त, अर्थात् लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका। इसका सारा श्रेय आदरणीय पण्डित कैलाशचन्द्रजी बुलन्दशहरवालों को जाता है।

सन् 1975 में जब हम पण्डित बाबूभाई मेहता, पण्डित नेमिचन्दजी पाटनी, डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल आदि द्वारा आयोजित धर्मचक्र यात्रा में शामिले हुए थे, तब अध्यात्म का कहो या आगम का कहो, कुछ गन्ध भी नहीं था, लेकिन आदरणीय पण्डित नेमिचन्दजी रखियालवालों ने हमें पकड़-पकड़कर द्रव्य-गुण-पर्याय, सात तत्त्वों से परिचित कराया। तब यह जरूर महसूस हुआ कि आज तक हम जिसे जैनधर्म कहते आये थे, उससे कोई अलग ही जैनधर्म का स्वरूप है। इस बोये हुए बीज को बहुत ही उत्कृष्टता से सींचा पण्डित कैलाशचन्द्रजी ने।

आप जानते नहीं होंगे कि उन्हें 'डण्डावाले पण्डित' ही कहते थे। एक शिक्षक - एक माँ अपने बच्चे को जितने लाड-प्यार से सिखाये, उससे भी अधिक ममता से, अपनेपन से वे सिद्धान्तों को हृदयंगम कराते थे। प्रसंग पाकर वे उतने ही कठोर होते थे। एक बात मुझे याद आयी - एक दिन ऐसा हुआ कि एक व्यक्ति से उन्होंने पूछा - 'क्यों भाई! कल स्वाध्याय में आप नहीं आये?' तब उसने कहा - 'पण्डितजी! मुझे थोड़ा काम था।' पण्डितजी ने कहा - 'अरे अभागे! थोड़े काम के लिये तूने जिनवाणी को ठुकराया? क्या होगा तेरा?'

एक दिन ऐसा हुआ, पण्डितजी ने एक से पूछा, 'क्यों भाई! कल स्वाध्याय में नहीं थे?' तब उसने कहा, 'मुझे बुखार था।' पण्डितजी ने पूछा, 'किसे बुखार था?' तो वह समझ गया और गड़बड़ाते हुए बोला, 'मेरे शरीर को बुखार था।' तब पण्डितजी ने बड़ी बेरहमी से कहा, 'तेरे बाप का शरीर!' तब वह व्यक्ति शर्मिन्दा हो गया और बाद में मुझे पता लगा कि वह आदमी मन्दिर का प्रेसिडेण्ट था।

मुझे यह बताना है कि पण्डितजी को जिनवाणी के प्रति इतना अपार स्नेह और आदर है कि कोई खोटा-खोटा बहाना बनाके स्वाध्याय में नहीं आते थे, तो उन्हें बिल्कुल पसन्द नहीं

था। वे कहते थे कि 'मुझे मुफ्त में रोटी नहीं तोड़नी है, मेरे पास जो है, वह आप अवश्य सीखो।' ऐसे अनेक किस्से हैं जो मुझे आज तक याद हैं। ऐसे चापलूसी किये बिना, निस्पृह रीति से सिखानेवाले निर्भीक और सत्यवादी शिक्षागुरु हमें प्राप्त हुए। इस कारण मुझे सिद्धान्त प्रवेशिका आज भी सीखने और सिखाने में बहुत आनन्द आता है।

मुझे गर्व है कि मैंने अमेरिका, दुबई, इंग्लैण्ड बगैरह विदेशों में भी सिद्धान्त प्रवेशिका ही पढ़ायी है। दशलक्षण पर्व के दसों ही दिनों में हर जगह मैंने इसी विषय को पढ़ाया। हर जगह प्रथम थोड़ा सा विरोध का सामना करना पड़ा लेकिन बाद में बहुत सराहना भी हुई। इसका पूरा-पूरा श्रेय तो पण्डित कैलाशचन्द्रजी को ही जाता है।

हर जगह पर, सिर्फ मङ्गलायतन में नहीं, यह विषय सिखाते हुए पण्डितजी के परम उपकार स्मरण किये बिना मेरे से रहा नहीं जाता। इन्हीं के कारण मेरी जिन्दगी में एक उत्तम मोड़ आया और मैं इस क्षेत्र में डटा रहा। मुझे लगता है कि अगर पण्डितजी मेरी जिन्दगी में नहीं आते तो -

'कहाँ लहता रहता (मैं) अविचारी ?'

अब तो वे सचमुच स्व में बस गये हैं

— डॉ. श्रीमती उज्ज्वला शहा, मुम्बई

'पवनजी, भले आप पण्डित कैलाशचन्द्रजी के सुपुत्र हो परन्तु हम आपसे अधिक सौभाग्यशाली हैं, हमने आपके पिताश्री से जो पाया है, वह आप उनके पुत्र होकर कभी प्राप्त नहीं कर सके।'

तीर्थधाम मङ्गलायतन में दशलक्षण पर्व 2008के अवसर पर सभा में मैंने यह बात कही थी, जिसे श्री पवनकुमारजी ने भी स्वीकारा था।

सन् 1976की बात है। जैन तत्त्वज्ञान के अभ्यास में हमारा नया-नया प्रवेश हुआ था। सन् 1975 की पण्डित बाबूभाई मेहता द्वारा आयोजित सौ दिन की धर्मचक्र यात्रा में मैं, मेरे पति श्री दिनेशचन्द्रजी, मेरी सास और ससुरजी सम्मिलित हुए थे। तब से तत्त्वज्ञान की जिज्ञासा जागृत हुई थी। दशलक्षण पर्व के अवसर पर दादर मन्दिर में पण्डित कैलाशचन्द्रजी

बुलन्दशहरवाले आनेवाले हैं, इस बात का पता चला। हम तो उनके बारे में कुछ नहीं जानते थे। वे दिन में तीन बार एक-एक घण्टा सिखानेवाले थे। हमने जाना निश्चित किया। मेरे सास -ससुर, हम दोनों, दिनेशजी के दोनों भाई-भाभियाँ, बहनें-बहनोई सब लोग प्रतिदिन जाने लगे। ये तीन भाई अपनी दुकान बन्द करके और मैं दवाखाना (क्लिनिक) बन्द करके समय से पहले हाजिर हो जाते थे। घर में रोज 25-30 लोगों की रसोई, घर का काम, बच्चों की देखभाल-पढ़ाई, दवाखाना और न जाने कितने काम... सब निपटाकर अत्यन्त उल्हास के साथ हम जाते थे।

वहाँ तो स्कूल की तरह पढ़ाई चलती थी। पण्डितजी विषय समझाते थे, फिर प्रश्न तो बहुत पूछते थे। इतने सारे लोग न जाने क्यों बहुत चुपचाप बैठते थे, उत्तर देने से डरते थे, मैं तो प्रश्न पूछते ही तत्काल हाथ ऊपर उठाकर जबाव दे देती थी, मेरे पश्चात् दिनेशजी उत्तर देने थे, दो बार सुनकर फिर भाई भी उत्तर देते थे। पण्डितजी हमारी फैमिली पर बहुत खुश होते थे। सबको हमारी मिसाल देकर हमारी तारीफ करते थे परन्तु हम सोचते थे कि हम इस तारीफ के काबिल नहीं हैं। एक-दो बार सुनकर उसको दोहराना हमारे लिये कुछ मुश्किल तो थी नहीं। मेडिकल की कठिन पढ़ाई करके तीन गोल्ड मेडल प्राप्त किये थे, यहाँ तो दिमाग लगाने की कोई बात नहीं थी। हम द्रव्यों के नाम, परिभाषाएँ आदि फटाफट बोल तो रहे थे परन्तु इन सब बातों का प्रयोजन क्या है ? तत्त्वज्ञान की पढ़ाई में - आत्मज्ञान करने में ये कैसे, कहाँ काम आते हैं ? - कुछ पता नहीं पड़ता था परन्तु धीरे-धीरे हमारी यह उलझन मिटने लगी। पण्डितजी विषय की तह तक जाकर उसको इस तरह हृदयंगम कराते थे कि कुछ सन्देह ही बाकी नहीं रहता था।

द्रव्य, गुण, पर्याय, छह सामान्य गुण, चार अभाव, निमित्त-उपादान आदि अनेक विषयों को प्रश्नोत्तर के रूप में, अनेक उदाहरणों पर घटित करके बताते थे। पण्डितजी साहब ने प्रश्नोत्तररूप में 'जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला' की सात पुस्तकें बनायी हैं, जो जिनागम में प्रवेश करने के लिये आज भी अद्वितीय साबित होती हैं। प्रत्येक विषय पर गहरा चिन्तन करके जन-जन को विषय हृदयंगम कराने की उनकी शैली भी अद्वितीय है।

उनकी कक्षा में प्रत्येक व्यक्ति जागरूक एवं चौकन्ना रहता था। किसी को नींद आती देखकर डस्टर से टेबल पर जोर-जोर से खटखटाकर बोलते थे, 'जागोऽ सोनेवालों!' अथवा चॉक का टुकड़ा फेंककर सोनेवाले को जागृत करते थे। उनका निशाना भी कभी चूकता नहीं था।

मङ्गल समर्पण

जिनवाणी के प्रचार-प्रसार के लिये तो उन्होंने अपना जीवन समर्पित किया है। बिना किसी प्रसार माध्यम से भारतभर के गाँव-गाँव में उन्होंने तत्त्वज्ञान की नींव डाली है। न उनके पास कोई पत्रिका थी, न कोई कैसेट्स, न कोई सीडीज। फिर भी हम आज तक जहाँ-जहाँ प्रवचन (कक्षा) के लिये गये हैं, उस प्रत्येक गाँव के लोगों ने स्वीकार किया है कि हम पण्डित कैलाशचन्द्रजी, बुलन्दशहरवालों से पढ़े हैं। मुझे याद है कि वे स्वयं अपने खर्चे से प्रचारार्थ आते-जाते थे। बदले में उन्होंने कभी कुछ नहीं चाहा। वे कभी भोजन में मिष्टान्न भी नहीं लेते थे। पहले ही बोल दिया करते थे कि जो कुछ बनाया है, वह सामने लाओ, मैं कहूँ उतना एक बार में ही थाली में परोस दो, दोबारा कुछ नहीं लूँगा।

वे अत्यन्त निस्पृह तो हैं ही, उतने ही स्पष्टवक्ता। उन्होंने कभी सम्मान की अपेक्षा नहीं की, न किसी अन्यरूप में समाज से कुछ चाहा। शरीर से ही नाता तोड़ा था तो किस चीज की इच्छा करते ?

गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के वे अनन्य भक्त हैं। उन्हीं से यह मार्ग मिला, उन्हीं से सब कुछ सीखा, इस बात का सहर्ष स्वीकार करते हैं। उन्होंने एक बार प्रवचन में कहा था कि स्वामीजी मिले, उसके पूर्व तो वे तीन महिनों तक आचार्य श्री शान्तिसागर महाराज के संघ में रहे थे। अन्य अनेक विद्वानों-अध्यात्म की चर्चा या विरोध करने हेतु सोनगढ़ गये थे और वहाँ के होकर रह गये। उनके कारण हम भी गुरुदेव की वाणी का मर्म समझने के काबिल हो गये।

हमारा परम सौभाग्य रहा कि पण्डितजी दशलक्षण पर्व के लिये आये थे, परन्तु लोगों की माँग को स्वीकारते हुए वे कार्तिक की अष्टाह्निका तक रुके थे। ढ़ाई महिने प्रतिदिन तीन घण्टे - हमने तो पूरा-पूरा लाभ लिया। अनेक विषयों का मर्म समझा, विषय हृदयंगम हो गये। निमित्त-उपादान का विषय सरल करके प्रश्नोत्तर के रूप में उन्होंने सबको बारम्बार समझाया था। कुम्हार और घड़े के सुप्रसिद्ध उदाहरण पर तो घटाकर स्वयं सिखाया ही था, अन्य अनेक उदाहरणों पर घटाकर लिखने के लिये वे 'गृहपाठ' भी देते थे। अनेक प्रश्नोत्तर वे लिखकर लाने के लिये देते थे। मुझे पक्का याद है घर के, दवाखाने के काम निपटाकर 'गृहपाठ' लिखने में रात के दो बज जाते थे। पण्डितजी की प्रसन्नता देखकर और उनके मुँह से अपनी प्रशंसा सुनकर उत्साह और बढ़ जाता था।

हम शरीर, कर्म के साथ एक क्षेत्रावगाही, निमित्त-नैमित्तिक आदि सम्बन्धों की चर्चा करते हैं, परन्तु पण्डितजी ने हमें सबसे पहला पाठ यही पढ़ाया कि मेरा किसी भी परद्रव्य से

कोई भी सम्बन्ध है ही नहीं। उनके अनेक वाक्य आज भी कानों में गूँजते हैं – 'एक ओर राम और एक ओर गाम', 'एक पलड़े में मैं और दूसरे पलड़े में विश्व के अन्य अनन्त जीव, पुद्गल.... सब कुछ, अरहन्त, सिद्ध, धन सम्पत्ति.... फिर भी मेरा ही पलड़ा भारी है'; 'ये सारे कुटुम्बीजन तो धुतारों की टोली है', 'तस्य देशना नास्ति', 'परथी खस स्व मां वस' और भी बहुत कुछ।

पण्डितजी मुझे 'डॉक्टरनी' कहकर बुलाते थे। ढ़ाई महीने के दौराने पण्डितजी कभी हमारे घर नहीं आये थे, सच कहूँ तो संकोच और डर के कारण उन्हें भोजन के लिये आमन्त्रित करना नहीं बन पाया था। एक दिन प्रवचन के पश्चात् बोले, 'डॉक्टरनी, मैं आपके घर भोजन करने आऊँगा। मेरे लिये थुली बनाओ और लौकी की सब्जी बनाओ। मैंने आज तक किसी के घर भोजन में कुछ भी मिष्ठान्न नहीं खाया है। मैं सामने से तुम्हें कह रहा हूँ, क्योंकि मैं तुम पर– तुम्हारी पूरी फैमिली पर बहुत प्रसन्न हूँ।' मैं तो बहुत प्रसन्न हो गयी, अन्य लोगों को बहुत अचरज लगा।

सन् 1976की दीपावली ऐसी थी कि जब घर में कुछ खास मिष्ठान्न और नमकीन चीजें नहीं बनी, बनाने के लिये फुरसत ही कहाँ थी ? घर के सभी सदस्य तीन–तीन बार प्रवचनों में और बाकी वक्त 'गृहपाठ' लिखने में व्यस्त रहते थे। फिर भी इतनी अच्छी दीपावली तक नहीं मनायी थी।

जब पण्डितजी का जाने का प्रसङ्ग आया, तब हम दोनों ने नमस्कार करके, उनके आशीर्वाद ग्रहण किये। तब उन्होंने कहा था, 'अब आपको किसी की जरूरत नहीं है। अब किसी के पास जाकर सीखने की आपको आवश्यकता नहीं है, आपने सिद्धान्तों का मर्म समझ लिया है।' उन्होंने उस समय कहा था, 'यह डॉक्टरनी है ना, इसका पूरे हिन्दुस्तान में पहला नम्बर है, इसके जैसा मुझे कोई नजर नहीं आया।' मैं तो 'धन्य–धन्य' हो गयी।

इस बात को करीबन 24–25 साल हो गये थे, एक दिन दिनेशजी के भाई के लड़के का दुकान से फोन आया। वैसे तो 1992 से ही दिनेशजी दुकान और मैंने मेडिकल प्रेक्टिस छोड़ी है – स्वाध्याय के लिए निवृत्ति ली है। फोन पर उसने बताया कि 'दादर ! मन्दिरजी से किसी भाई का फोन आया था, उसने बताया है कि पण्डित कैलाशचन्द्रजी ने दिनेशभाई एवं डॉ. उज्ज्वलाजी को मिलने के लिये बुलाया है।' हम दूसरे ही दिन उनके प्रवचन में गये थे। प्रवचन के पश्चात् याद करके हमें नजदीक बुला लिया, कुछ शास्त्र भेंट किये और सबके सामने हमारी

तारीफ की। पण्डितजी तो हमारे दिल और दिमाग में विराजमान रहते ही हैं, उन्होंने भी इतने सालों बाद याद करके बुलाया, इस बात का बहुत आनन्द हुआ।

सन् 2003 में तीर्थधाम मङ्गलायतन के पञ्च कल्याणक में पण्डितजी से फिर मुलाकात हुई थी, गुरु-शिष्य मिलकर प्रसन्नता हुई। भोजनशाला में मैंने कहा, 'मैं आपके लिये चाय लेकर आती हूँ, आप यहीं रुकना।' वे तत्काल बोले, 'तुम क्या लाओगी? वह (चाय) स्वयं चलकर आयेगी।' मुझे याद आया, पण्डितजी ने ही हम सबसे कण्ठस्थ करा लिया था —

'अनादि निधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादासहित परिणमित होती हैं, कोई किसी को परिणमा नहीं सकता, पर को परिणमाने का भाव निगोद है।'

सन् 2008में मङ्गलायतन में हम उनसे मिले। तब वे किसी को पहचानते नहीं थे, हमें भी नहीं पहचाना परन्तु श्री पवनजी ने उनके कान में कुछ बताया तो फटाफट सारे बोल बोलने लगे।

'पर से खस, स्व में बस, तो आयेगा अतीन्द्रिय रस।'

अब तो वे सचमुच पर से खसकर स्व में बस गये हैं।

एक मन्त्र जिसने जीवन संवारा

— **डॉ. (श्रीमती) स्वर्णलता जैन,** नागपुर, महाराष्ट्र

पितृतुल्य परम आदरणीय गुरुवर पण्डित कैलाशचन्द्रजी, बुलन्दशहरवालों का वह उपकार जिन्होंने मेरे जीवन की अमृत (अ=नहीं, मृत=मरा हुआ) अर्थात् जीवन्त बना दिया। सम और विषम परिस्थिति जो जीवन का सत्य है, उसमें समभाव रखने का मन्त्र 'अनादिनिधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादासहित परिणमित होती है, कोई किसी के आधीन नहीं, कोई किसी के परिणमन कराने से परिणमित नहीं होती; पर को परिणमन कराने का भाव मिथ्यात्व है।'

बात उन दिनों की है जब पण्डितजी, सागर आते और घर पर भोजन करने के बाद हाजमे की दवाई लेने दुकान पर मुझे भेजते थे — पण्डितजी की दवाई लेने दुकान जाती थी, कभी पण्डितजी पोस्टकार्ड मंगाते फिर पैसे भेजते परन्तु पिताजी पैसे वापिस करते और कहते